चौथी दुनिया

www.chauthiduniya.com

मूल्य 5 रुपये

हिंदी का पहला साप्ताहिक अख़बार

1986 से प्रकाशित | 21 अगस्त- 27 अगस्त 2017 | नई दिल्ली | हर शुक्रवार को प्रकाशित | Postal Regn. No. DL (ND)-11/6139/2015-17, RNI No. DELHIN/2009/30467

मुलायम सिंह नहीं हारेंगे

संतोष भारतीय

भारतीय राजनीति में ऐसे व्यक्ति गिने-चुने हुए हैं, जिन्होंने सिर्फ अपनी क्षमता के आधार पर सर्वोच्च स्थान बनाया हो. उन चंद नामों की सूची में मुलायम सिंह का भी नाम आता है. मुलायम सिंह इसलिए सबसे अलग हैं कि उन्होंने अपने पूरे परिवार को राजनीति में स्थापित किया और उनके ऊपर सबसे ज्यादा भरोसा किया, जिन्हें पच्चीस सालों तक सजाया-संवारा, पाला-पोषा, लेकिन भारत की राजनीति में विश्वासघात से अगर आज कोई सबसे दुखी व्यक्ति है, तो वे मुलायम सिंह यादव हैं. मुलायम सिंह यादव जब बात करते हैं, तब उनके चेहरे पर अब उत्साह नहीं दिखाई देता. उनकी आंखें सूनी हैं. उनकी मुस्कान दर्द भरी है. उनकी भाषा में वो खनक नहीं है. ये सब इसलिए हुआ है कि जिस परिवार को मुलायम सिंह यादव ने राजनीति में सर्वोच्च स्तर पर स्थापित किया, उस परिवार ने उन्हें पूरे तौर पर सिर्फ अपने से अलग ही नहीं किया, बल्कि एक तरह से उन्हें धोखा भी दिया.

मुलायम सिंह की जिंदगी के बारे में सबको पता है कि वो एक इंटर कॉलेज में शिक्षक थे, जहां से उन्होंने धीरे-धीरे बिल्कुल कछुए की गति से अपने पैर राजनीति की तरफ बढ़ाए. कैसे वो चौधरी चरण सिंह के नजदीक गए? कैसे उन पर लोहिया के विचारों का प्रभाव पड़ा और उन्होंने लोहिया के सिद्धांतों को अपनी राजनीति का आधार बनाया. कैसे वो चौधरी देवीलाल के नजदीक गए. उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री रामनरेश यादव रहे हों या बनारसीदास गुप्त, जनता पार्टी की सरकारों में मुलायम सिंह मंत्री बने. उन्होंने पूरे मध्य उत्तर प्रदेश के पश्चिमी हिस्से को अपनी राजनीति का प्रभाव क्षेत्र बना डाला. एटा, इटावा, मैनपुरी, फर्रुखाबाद, कानपुर, अलीगढ़ उनकी राजनीति के अभेद किले के रूप में परिवर्तित हो गए. इसी दौरान उन्होंने राजनीति में अपने परिवार के लोगों को स्थापित करना शुरू किया. मुलायम सिंह यादव उत्तर प्रदेश में कई बार मुख्यमंत्री बने. उन्होंने कांशीराम जी के साथ हाथ मिलाकर उत्तर प्रदेश की राजनीति को पूरे तौर पर बदल डाला. वे बाद में केन्द्र में मंत्री रहे. रक्षा मंत्री के तौर पर उनका जवानों के साथ संपर्क आज भी सेना के जवानों को याद है, भले ही वो रिटायर हो गए हों. मुलायम सिंह देश के प्रधानमंत्री बनते-बनते रह गए. मुलायम सिंह के नजदीक के लोगों का कहना है कि सिर्फ लालू यादव के हठ ने उन्हें प्रधानमंत्री नहीं बनने दिया.

पर ये महत्वपूर्ण नहीं है, महत्वपूर्ण ये है कि इतने विशालकाय व्यक्तित्व का नेता, जिसके पास कहने के लिए गौरव ही गौरव है, वो आज सबसे दुखी क्यों बैठा हुआ है? इस दुख का सबसे बड़ा कारण उनके चचेरे भाई प्रोफेसर रामगोपाल यादव हैं. मुलायम सिंह ने राजनीति में सबसे पहले अपने भाई रामगोपाल यादव को उतारा. प्रोफेसर रामगोपाल को सपने में भी ये उम्मीद नहीं थी कि वे राज्यसभा में जाएंगे. आज के गृहमंत्री राजनाथ सिंह, जो उन दिनों उत्तर प्रदेश भारतीय जनता पार्टी के सर्वेसर्वा थे, उन्होंने मुलायम सिंह यादव से कहा कि अगर वो अपने परिवार के किसी व्यक्ति को राज्यसभा में भेजना चाहें, तभी वो मदद कर सकते हैं, अन्यथा नहीं. मुलायम सिंह यादव ने एक क्षण में फैसला किया और अपने दफ्तर को निर्देश दिया कि वो प्रोफेसर रामगोपाल यादव का नामांकन पत्र तैयार करें. दूसरी तरफ उन्होंने रामगोपाल यादव को फोन किया कि वो जल्दी से जल्दी लखनऊ पहुंचें. रामगोपाल यादव को कोई अनुमान नहीं था. वे लखनऊ पहुंचे, नामांकन पत्रों पर दस्तखत किए और राज्यसभा पहुंच गए.

मुलायम सिंह यादव ने अपने दूसरे भाई, जो दरअसल उनके सगे भाई हैं, शिवपाल सिंह यादव को उत्तर प्रदेश की राजनीति में आगे बढ़ाया और दोनों का कार्यक्षेत्र लगभग बांट दिया. प्रोफेसर रामगोपाल राष्ट्रीय राजनीति कर रहे थे और शिवपाल यादव उत्तर प्रदेश की राजनीति कर रहे थे. मुलायम सिंह यादव दिल्ली में हर बात के लिए प्रोफेसर रामगोपाल यादव के ऊपर निर्भर थे. दरअसल रामगोपाल यादव उनके आंख, नाक, कान, हाथ और पैर सब बन चुके थे. अमर सिंह के साथ रिश्ता रहा हो, अमर सिंह के साथ रिश्ते का टूटना रहा हो, ये सब मुलायम सिंह ने प्रोफेसर रामगोपाल यादव की राय से किया. अनिल अंबानी को राज्यसभा में भेजने की सलाह भले ही अमर सिंह ने दी हो, लेकिन मुलायम सिंह को समझाने का काम रामगोपाल यादव ने किया. जिन दिनों अमर सिंह मुलायम सिंह यादव के चेहरे के रूप में सारे देश में पहचाने जाते थे और अमर सिंह के फैसले का मतलब मुलायम सिंह यादव होता था, उस समय भी फैसले लेने के पीछे की ताकत प्रोफेसर रामगोपाल यादव थे. अमर सिंह प्रोफेसर रामगोपाल यादव को हर नेता के यहां ले जाकर स्थापित कर रहे थे. दूसरी तरफ रामगोपाल यादव मुलायम सिंह का दिमाग बन चुके थे. सलाह अमर सिंह की होती थी और फैसला रामगोपाल यादव का होता था.

मुलायम सिंह यादव ने 25 साल तक प्रोफेसर रामगोपाल यादव के कहने पर फैसले लिए, उनके कहने पर फैसले बदले. अभी तीन साल पहले मुलायम सिंह के घर पर विपक्षी नेताओं की एक बैठक हुई, जिसमें सबने एक दल बनाने का संकल्प लिया. यह संकल्प इस अर्थ में अनूठा था कि मुलायम सिंह यादव की पार्टी का झंडा, उनका चुनाव चिन्ह, उनकी पार्टी का नाम, पार्लियामेंट के बोर्ड और पार्टी के अध्यक्ष मुलायम सिंह यादव हों, इस पर सबकी सहमति हो गई. इस बैठक में सभी प्रमुख नेता शामिल थे और देश में एक बड़ा राजनैतिक परिवर्तन होने की संभावना पैदा हो गई थी. लेकिन प्रोफेसर रामगोपाल यादव के समझाने के बाद तीन महीने के भीतर ही मुलायम सिंह यादव ने इस फैसले को पलट दिया.

इससे पहले उत्तर प्रदेश में विधानसभा चुनाव के बाद मुलायम सिंह यादव को दो-तिहाई से ज्यादा बहुमत आया और जब ये फैसला लेने का वक्त आया कि मुख्यमंत्री कौन बनेगा, तब पार्लियामेंटरी बोर्ड की

(शेष पृष्ठ 2 पर)

लोग भले ही चुप हों, पर नेताजी का दर्द पूरी पार्टी का दर्द है...

मुलायम का दर्द पूरी समाजवादी पार्टी का दर्द है. अखिलेश यादव के अध्यक्ष बन जाने के बाद भी पार्टी उनकी नहीं है, पार्टी अभी भी भावनात्मक रूप से मुलायम की ही है. लोग चुप्पी साधे वक्त का इंतजार कर रहे हैं. समाजवादी पार्टी के प्रतिबद्ध नेता रहे डॉ. अशोक वाजपेयी ने बड़े भारी मन से पार्टी छोड़ी और विधान परिषद के सदस्य के पद से इस्तीफा दिया. डॉ. वाजपेयी ने कहा कि अब उनसे नेताजी का दर्द देखा नहीं जा रहा था. जिस राजनेता ने अपनी त्याग तपस्या से समाजवादी पार्टी खड़ी की और सत्ता-प्रतिष्ठा दिलाई, उस महापुरुष की प्रतिष्ठा की उपेक्षा पार्टी के रसातल में जाने की मूल वजह है. डॉ. वाजपेयी कहते हैं, 'राजनीतिक मजबूरियों के कारण सपा के कई पुराने लोग नेताजी के साथ हुए व्यवहार पर चुप हैं, लेकिन वे अंदर से व्यथित हैं. मैं राजनीतिक मजबूरी अधिक दिनों तक अपने साथ नहीं ढो सकता था, इसलिए भारी मन से इस्तीफा देकर सपा से अलग हो रहा हूं. पर मैं नेताजी से अलग नहीं हूं.' सपा के साथ लंबे समय से जुड़े रहे बुक्कल नवाब ने भी विधान परिषद से इस्तीफा देते हुए यही कहा, 'अखिलेश यादव में कोई राजनीतिक समझ नहीं है और उन्हें कोई समझा भी नहीं सकता. जब उन्होंने नेताजी जैसे पिता से सीख नहीं ली तो हम लोगों से क्या समझेंगे. समाजवादी पार्टी में व्याप्त नासमझी और गैर राजनीतिक माहौल में पार्टी से अलग हो जाना ही बेहतर था, लेकिन नेताजी से राजनीतिक तौर पर अलग होना मेरे लिए तकलीफदेह है.' अखिलेश यादव के व्यवहार से दुखी होकर बसपा में चले गए वरिष्ठ नेता अंबिका चौधरी को भी नेताजी का साथ छोड़ने की पीड़ा है. अंबिका चौधरी ने भी विधान परिषद से इस्तीफा देकर कहा, 'नेताजी के कारण ही मुझे एमएलसी बनाया गया था, जब नेताजी की ही प्रतिष्ठा नहीं तो ऐसी पार्टी का एमएलसी बनना मुझे गवारा नहीं.'

3 आदिवासियों को सता रहा विस्थापन का डर

4 पढ़ाई और दवाई दोनों महंगे

6 आधार एक फौजी योजना है जो विश्व व्यापार से भी जुड़ी है

7 केरल : इस राजनीतिक हिंसा की आग को हवा कौन देता है

मुलायम सिंह नहीं हारेंगे

पृष्ठ 1 का शेष

मीटिंग में सबसे पहले प्रोफेसर रामगोपाल यादव ने कहा कि अखिलेश यादव मुख्यमंत्री बनेंगे और कौन बनेगा. कोई कुछ नहीं बोला, सिर्फ शिवपाल यादव ने कहा कि छह महीने नेता जी यानि मुलायम सिंह यादव मुख्यमंत्री रहें, अखिलेश उनके साथ मंत्री रहें. उसके बाद मुलायम सिंह यादव दिल्ली की राजनीति देखें और अखिलेश यादव मुख्यमंत्री बनें. दो दिन इसी उहा-पोह में बीत गए. तीसरे दिन सुबह मुलायम सिंह यादव ने शिवपाल यादव को बुलाया और कहा कि सबलोग अखिलेश के लिए कह रहे हैं, इसलिए तुम भी मान जाओ. अखिलेश यादव उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री बन गए.

मुलायम सिंह का यहीं से मन खट्टा होना शुरू हुआ. मुलायम सिंह चाहते थे उत्तर प्रदेश इस तरह चले कि आगे आने वाले चुनाव में, जिनमें लोकसभा और विधानसभा के चुनाव शामिल थे, समाजवादी पार्टी ज्यादा से ज्यादा सीटें प्राप्त करे. वो अखिलेश यादव को सरकार चलाने के गुर बताते जाते थे, लेकिन वे उन सलाहों पर कोई अमल नहीं कर रहे थे. उन दोनों में रहस्य था कि क्यों अखिलेश यादव उन सुझावों पर अमल नहीं कर रहे हैं. अब ये अंदाजा हो रहा है कि वो प्रोफेसर रामगोपाल यादव की सलाह पर उन फैसलों को अमलीजामा नहीं पहना रहे थे. प्रोफेसर रामगोपाल यादव ने अखिलेश यादव के मुख्यमंत्री बनते ही उनके दिल और दिमाग का काम करना शुरू कर दिया. मुलायम सिंह इस बात को कभी समझ नहीं पाए कि अखिलेश यादव क्यों उनकी बात नहीं मान रहे हैं. उन्होंने कई बार अखिलेश यादव को समझाया कि सबसे पहले किसानों के हित की योजनाएं उनकी प्राथमिकता होनी चाहिए, जिन्हें किसान देख सके, समझ सके और अपने जीवन में उनका फायदा भी ले सके. पर अखिलेश यादव के ज्यादातर विकास से जुड़े फैसले शहरी क्षेत्रों को लेकर हुए. प्रचार बहुत हुआ, लेकिन उस प्रचार ने चुनाव के समय अखिलेश यादव के लिए एक मुसीबत खड़ी कर दी. उन प्रचारित नतीजों को जब लोग अपने आसपास देखने लगे, तब वो जमीन पर कहीं दिखाई नहीं दी. प्रोफेसर रामगोपाल यादव की राय पर अखिलेश ने उत्तर प्रदेश की सरकार चलाई और उन्होंने अपने सगे चाचा शिवपाल यादव को एक कोने में खड़ा कर दिया. अखिलेश यादव के मंत्रिमंडल में अगर सबसे ज्यादा दयनीय स्थिति किसी की थी, तो वो शिवपाल यादव की थी. मुलायम सिंह शिवपाल यादव से कहते थे, शिवपाल यादव अखिलेश यादव से कहते थे, अखिलेश यादव उसे सुनकर मना भी नहीं करते थे और काम भी नहीं करते थे. दरअसल अखिलेश यादव शायद यह भूल नहीं पाए कि शिवपाल यादव ने मुख्यमंत्री के पद का प्रस्ताव आने पर पार्लियामेंट के बोर्ड में उनका विरोध किया था और यहीं पर सत्ता का विचार और सत्ता का चरित्र सामने आता है. प्रोफेसर रामगोपाल यादव ने अखिलेश यादव का नाम प्रस्तावित किया था, इसलिए वो अखिलेश यादव के दिल और दिमाग पर अपने पिता मुलायम सिंह यादव से ज्यादा जादू बनकर सवार हो गए.

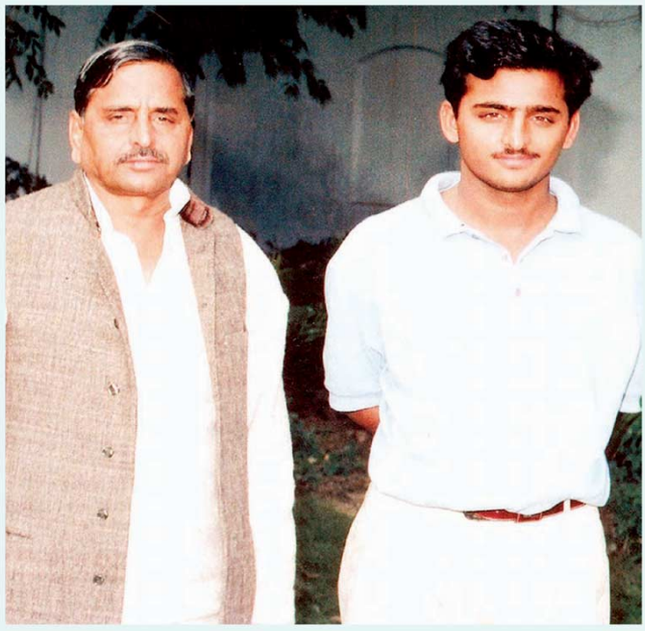

मुलायम सिंह यादव और अखिलेश यादव के बीच विधानसभा चुनाव में टिकटों को लेकर तनाव बढ़ गया. मुलायम सिंह चाहते थे कि पार्टी के पुराने कार्यकर्ताओं को टिकट दिया जाए, जबकि अखिलेश यादव ने, पिछले चार साल में मुख्यमंत्री रहते हुए जिन लोगों को नई पार्टी के रूप में तैयार किया था, जिनमें ज्यादातर ठेकेदार और नौजवान थे और जिनका जनता के बीच कोई काम नहीं था, उन लोगों को टिकट दिए. मुलायम सिंह को लगा कि ये सब चुनाव हार जाएंगे. उन्होंने अखिलेश से कहा कि ये सारे लोग चुनाव हार जाएंगे, पर उन्होंने मुलायम सिंह की बातों पर कोई ध्यान नहीं दिया. इसके पहले लोकसभा के चुनाव में पार्टी की बुरी तरह से हार हुई और केवल पांच सदस्य जीते, वो भी मुलायम सिंह के परिवार के लोग थे.

मुलायम सिंह यादव और अखिलेश यादव के बीच विधानसभा चुनाव में टिकटों को लेकर तनाव बढ़ गया. मुलायम सिंह चाहते थे कि पार्टी के पुराने कार्यकर्ताओं को टिकट दिया जाए, जबकि अखिलेश यादव ने, पिछले चार साल में मुख्यमंत्री रहते हुए जिन लोगों को नई पार्टी के रूप में तैयार किया था, जिनमें ज्यादातर ठेकेदार और नौजवान थे और जिनका जनता के बीच कोई काम नहीं था, उन लोगों को टिकट दिए. मुलायम सिंह को लगा कि ये सब चुनाव हार जाएंगे. उन्होंने अखिलेश से कहा कि ये सारे लोग चुनाव हार जाएंगे, पर उन्होंने मुलायम सिंह की बातों पर कोई ध्यान नहीं दिया. इसके पहले लोकसभा के चुनाव में पार्टी की बुरी तरह से हार हुई और केवल पांच सदस्य जीते, वो भी मुलायम सिंह के परिवार के लोग थे.

विधानसभा चुनाव में टिकट बंटवारे के समय अखिलेश यादव और शिवपाल यादव का आपसी द्वंद्व चरम पर था. अखिलेश यादव ने बड़ी समझदारी और होशियारी से शिवपाल यादव को किनारे लगा दिया. शिवपाल यादव वो फैसले करते थे, जिन्हें मुलायम सिंह यादव कहते थे, लेकिन मुलायम सिंह यादव अपने सारे फैसले अखिलेश को ध्यान में रखकर करते थे. उन्हें लगता था कि अखिलेश आज नहीं तो कल जमीन की सच्चाई को समझ जाएंगे. इस बीच प्रोफेसर रामगोपाल यादव मुलायम सिंह के साथ कम अखिलेश यादव के साथ ज्यादा नजर आते थे.

इसी दौरान जब रामगोपाल यादव ने लखनऊ में समाजवादी पार्टी के सम्मेलन में ये प्रस्ताव रखा कि अखिलेश यादव को राष्ट्रीय अध्यक्ष बनाया जाए, तब मुलायम सिंह की आंखों से आंसू निकल पड़े. उन्हें लगा कि उनका अगर किसी ने विश्वास तोड़ा है, तो वो रामगोपाल यादव हैं. आज मुलायम सिंह याद करते हैं कि रामगोपाल यादव के पास एक मोटरसाइकिल थी. गांव में जमीन नहीं थी, शायद तीन या चार बीघा जमीन रही होगी. मुलायम सिंह यादव ने प्रोफेसर रामगोपाल यादव, उनके पुत्र, अपने बड़े भाई और छोटे भाई के बेटों सबको राजनीति में स्थापित किया. लगभग सभी सांसद हैं. दूर के रिश्तेदार विधानपरिषद में हैं. जब मुलायम सिंह की जिंदगी भर की कमाई पर अखिलेश यादव काबिज हो रहे थे, जिसकी योजना प्रोफेसर रामगोपाल यादव की तैयार की हुई थी, उस समय मुलायम सिंह के साथ कोई नहीं था, सिर्फ शिवपाल यादव उनके साथ थे.

आज मुलायम सिंह जब पिछले दिनों को याद करते हैं, तो आंखों का वो सूनापन उन सबके हृदय को थर्रा देता है, जो अपने परिवार को कार्यकर्ताओं के ऊपर राजनीति में स्थापित करना चाहते हैं. मुलायम सिंह यादव अखिलेश यादव के रवैये से उतने दुखी नहीं हैं, जितना वो प्रोफेसर रामगोपाल यादव के रवैये से दुखी हैं. 25 साल का जश्न प्रोफेसर रामगोपाल यादव ने फाइव स्टार होटल में मनाया, जिसमें प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी गए. लेकिन वो शख्स जिसने रामगोपाल यादव को इस लायक बनाया कि वो 25 साल का जश्न मना सके, वो वहां पर नहीं था. प्रोफेसर रामगोपाल यादव मुलायम सिंह के घर उन्हें बुलाने के लिए नहीं गए.

मुलायम सिंह यादव को इस बात का भी बहुत दुख है कि प्रोफेसर रामगोपाल यादव की परिवार को तोड़ने की राजनीति ने, धर्मेन्द्र यादव जो बदायूं से सांसद हैं, उनको भी विषाक्त कर दिया है. अपने किसी मित्र से मुलायम सिंह यादव ने कहा कि धर्मेन्द्र यादव ने तो उनकी अपनी जमीन के ऊपर भी कब्जा कर लिया है. धर्मेन्द्र यादव के साथ-साथ मैनपुरी के सांसद तेजप्रताप यादव, जो उनके पोते लगते हैं, वो सारे लोग उनके दुख का कारण बने हुए हैं.

प्रोफेसर रामगोपाल यादव इस देश के सबसे बड़े राजनीतिक परिवार में इतनी पैठ कर चुके हैं कि बताने वाले बताते हैं कि अखिलेश यादव के दो बच्चों से जितना मुलायम सिंह प्यार करते थे, करते हैं, अब उन बच्चों को देखने के लिए भी उन्हें काफी इंतजार करना पड़ता है. लोगों को शायद उस केमिस्ट्री के बारे में अंदाजा हो कि बाप को जितना अपना बेटा प्यारा नहीं होता है, उससे ज्यादा बेटे का बेटा प्यारा होता है. अखिलेश यादव के दो बच्चे हैं. वो दो बच्चे जब पहले मुलायम सिंह के पास जाते थे, तब वे अपनी बीमारी तक भूल जाते थे. अब उन बच्चों का मुलायम सिंह यादव के पास जाना काफी कम हो गया है. मुलायम सिंह यादव ने सारी जिंदगी हर प्रकार के दांव और पेंच लगाकर सिर्फ अपने को ऊपर नहीं बढ़ाया, बल्कि अपने परिवार को भी बढ़ाया. उन्होंने उन सारे अवरोधों को हटाया, जो प्रोफेसर रामगोपाल यादव, शिवपाल यादव या स्वयं उनके बेटे अखिलेश के रास्ते में आ सकते थे. उन्होंने अपनी बहू यानि अखिलेश यादव की पत्नी डिंपल यादव को जितना स्नेह दिया, वो मुलायम सिंह के परिवार को जानने वाले प्रशंसा के रूप में बताते हैं. पर डिंपल यादव भी अब मुलायम सिंह यादव से लगभग नहीं मिलती हैं. दीवारें पास-पास हैं, दरवाजे-खिड़कियां लगे अवश्य हैं, लेकिन खुलते नहीं हैं.

इसलिए उत्तर प्रदेश की राजनीति में नितांत एकाकी, निराश भविष्य की संभावनाओं में अपने लिए नई चुनौती ढूंढता हुआ अगर कोई व्यक्ति है, तो मुलायम सिंह यादव हैं. मुलायम सिंह यादव ने यह फैसला किया है कि वो सितंबर महीने से उत्तर प्रदेश की कमिश्नरियों में सम्मेलन करना शुरू करेंगे. पर इस बात को प्रोफेसर रामगोपाल यादव और अखिलेश यादव नहीं समझ रहे हैं कि मुलायम सिंह पहलवान हैं. मुलायम सिंह ने लाठियां खाई हैं. मुलायम सिंह के ऊपर गोलियां चली हैं. मुलायम सिंह ने अपनी जान बचाने के लिए स्वयं गोलियां चलाई हैं. मुलायम सिंह यादव निराश हो सकते हैं, लेकिन हार नहीं सकते. पहलवान वही होता है, जो लंगोट बांधकर अखाड़े में गिर जाए और फिर धूल झाड़ता हुआ खड़ा होकर सामने वाले को ललकारे. मुलायम सिंह उम्र के इस दौर में भी उत्तर प्रदेश में नई राजनीति के लिए लोगों के बीच जाने का मन बना रहे हैं. जब मुलायम सिंह सितंबर में शुरू होने वाले अपने दौरे के बारे में बताते हैं, तो उनका चेहरा वही तीस साल पहले के मुलायम सिंह जैसा हो जाता है. उस मुस्कान में और अपना दर्द पीने वाले मुस्कान में जमीन आसमान का फर्क है.

अभी भी ये भरोसा करना चाहिए कि मुलायम सिंह हारेंगे नहीं. मुलायम सिंह नए सिरे से ताल ठोक कर खड़े होंगे और उत्तर प्रदेश के लोगों को अपने साथ एक बार फिर खड़ा करने की कोशिश करेंगे. यहीं पर मुझे कहावत याद आती है, सौ सोनार की एक लोहार की. मुलायम सिंह का अतीत संघर्ष वाला है, लेकिन गौरवशाली है. मुलायम सिंह का भविष्य भी गौरवशाली बने, ये उनके दर्द को जानने और समझने वाले उनके साथी ईश्वर से लगातार प्रार्थना कर रहे हैं. ■

feedback@chauthiduniya.com

चौथी दुनिया
हिंदी का पहला साप्ताहिक अखबार

वर्ष 09 अंक 25
21 अगस्त- 27 अगस्त 2017

RNI-DELHIN/2009/30467

संपादक
संतोष भारतीय

एडिटर (इंवेस्टिगेशन)
प्रभात रंजन दीन

सहायक संपादक
सरोज कुमार सिंह (बिहार-झारखंड)
सरयू भवन, वेस्ट बोरिंग केनाल रोड,
हरीलाल स्वीट्स के निकट, पटना-800001
फोन: 0612 3211869, 09431421901

मैसर्स अंकुश पब्लिकेशंस प्राइवेट लिमिटेड के लिए मुद्रक व प्रकाशक रामपाल सिंह भदौरिया द्वारा जागरण प्रकाशन लिमिटेड डी 210-211 सेक्टर 63 नोएडा उत्तर प्रदेश से मुद्रित एवं के- 2, गैनन, चौधरी बिल्डिंग, कनॉट प्लेस, नई दिल्ली 110001 से प्रकाशित

संपादकीय कार्यालय
के-2, गैनन, चौधरी बिल्डिंग कनॉट प्लेस, नई दिल्ली 110001
कैंप कार्यालय एफ-2, सेक्टर -11, नोएडा, गौतमबुद्ध नगर उत्तर प्रदेश-201301

फोन न.
संपादकीय 0120-6451999
6450888
विज्ञापन व प्रसार 022-65500786
+91-8451050786
+91-9266627379
फैक्स न. 0120-2544378

पृष्ठ-16++ (बिहार-झारखंड, उत्तर प्रदेश-उत्तराखंड)

चौथी दुनिया में छपे सभी लेख अथवा सामग्री पर चौथी दुनिया का कॉपीराइट है. बिना अनुमति के किसी लेख अथवा सामग्री के पुनः प्रकाशन पर क़ानूनी कार्रवाई की जाएगी.

समस्त कानूनी विवादों का क्षेत्राधिकार दिल्ली न्यायालयों के अधीन होगा.

मध्यप्रदेश में बैतूल के जंगलों में हो रही यूरेनियम की खोज

आदिवासियों को सता रहा विस्थापन का डर

जंगलों में रह रहे आदिवासियों को बार-बार विस्थापन के रूप में विकास की कीमत चुकानी पड़ रही है. विकास को लेकर लोगों के अपने-अपने तर्क हैं. विकास है, तो विस्थापन भी होगा. भूगर्भ में छिपे खनिज संसाधनों और उद्योग-धंधों के विस्तार के लिए बड़े-बड़े भूखंडों की जरूरत है. सबसे ज्यादा खनिज संसाधन जंगलों में ही छिपे हैं. यही बात आदिवासियों के लिए दुर्भाग्य बन गयी है. ये आज तक इसलिए संरक्षित रहे, क्योंकि सदियों से आदिवासी समाज इन प्राकृतिक संसाधनों का रक्षक बना रहा है. अगर ये भी लुट गए, तो फिर आगे क्या...

चंदन राय

मध्यप्रदेश में बैतूल क्षेत्र में कुछ महीनों से हेलिकॉप्टर आदिवासी क्षेत्रों और जंगलों के ऊपर मंडरा रहे हैं. उनमें कुछ मशीनें रखी हैं, जो इस क्षेत्र में यूरेनियम की खोज करने के लिए रेडियो एक्टिव तरंगों को पकड़ने की कोशिश कर रही हैं. वहीं आदिवासियों की जमीनों पर भारी-भरकम ड्रिलिंग मशीनें खुदाई के काम में जुटी हैं. कोचामऊ गांव के कल्ला और बल्ला बताते हैं कि शुरू में तो उन्हें समझ में नहीं आया कि ये अधिकारी उनके खेतों में क्या कर रहे हैं? आखिर कुछ लोग हिम्मत जुटाकर अधिकारियों के पास पहुंचे और उनसे पूछा कि आप हमारे खेतों में गड्ढा क्यों खोद रहे हैं? अधिकारियों ने टरकाने के अंदाज में उनसे कहा कि वे जमीन के नीचे पानी खोज रहे हैं. लेकिन जब आदिवासी अपनी जमीन छोड़ने के लिए तैयार नहीं हुए, तब उन्होंने सरकारी काम में बाधा डालने का आरोप लगाकर उन्हें डराना-धमकाना चाहा. जब फिर भी वे डटे रहे, तब उन्होंने कहा कि आप हमारे अधिकारियों से बात कर लो. अगर वे मना करते हैं, तो हम चले जाएंगे. मंगल कल्ला कहते हैं कि जमीन हमारी है या सरकार की. जब तक हम जोत रहे हैं, हमारी जमीन हमसे कोई नहीं छीन सकता. भारी-भरकम मशीनों के जरिए एक हजार हेक्टेयर में यूरेनियम संभावित क्षेत्रों में खुदाई की जा रही है. आदिवासियों के खेतों में खड़ी फसलें मशीनों द्वारा जगह-जगह की गई खुदाई से बरबाद हो गई हैं. आदिवासी महिलाओं को जंगलों में जाने से रोक दिया गया है. वनोत्पाद को औने-पौने दामों में बाजार में बेचकर वे अपने परिवार का पेट भरती हैं. जंगलों की लकड़ियों से ही उनके घरों में चूल्हा जलता है. खेती और वनोपज ही आदिवासियों की जीविका का एकमात्र साधन है. गांव के पास से बहने वाली एक नदी की धारा को भी मोड़ दिया गया है, जिससे ग्रामीणों को पेयजल और फसलों की सिंचाई में परेशानी हो रही है. वहीं इन बातों से अनजान अधिकारी सिर्फ इससे खुश हैं कि यदि यहां यूरेनियम मिल गया, तो बैतूल दुनिया भर में चर्चा के केंद्र में आ जाएगा. आदिवासियों की पीड़ा को न केंद्र और राज्य सरकार समझ रही है और न ही स्थानीय प्रशासन. अभी तो आदिवासियों को केवल जंगल और उनके खेतों में जाने से रोका गया है, यूरेनियम मिलने पर 13 गांवों के 4000 से अधिक लोगों को पलायन का दंश झेलना होगा. ये गांव खापा, झापड़ी और कच्चर इन तीन पंचायतों के अंतर्गत आते हैं. यहां की अधिकतर आबादी कोर्कू और गौंड जनजातियों की है. विवाद तब शुरू हुआ, जब सरकारी अधिकारियों ने आदिवासी महिलाओं को जंगल से लकड़ियां लाने और उनके खेतों में जाने से रोक दिया. मंगल कल्ला बताते हैं कि इन अधिकारियों ने हमारी फसलों और जंगलों को तहस-नहस कर दिया है. इससे पहले 1971 में भी केसला ब्लॉक में टेस्ट फायरिंग रेंज बनाने के लिए 23 गांवों के एक हजार से अधिक लोगों की जमीन छीन ली गई थी, जिसमें मात्र 600 लोगों को जमीन दी गई, बाकी लोग बेघर हो गए. फागराम बताते हैं कि उनके पास छह हेक्टेयर जमीन थी, लेकिन अब वे बेघर हैं. एक बार फिर उन्होंने किसी तरह जीना शुरू किया है, अब ये अधिकारी फिर हमें उजाड़ने आ गए हैं. इस बार वे किसी भी कीमत पर अपनी जमीन नहीं छोड़ेंगे.

श्रमिक आदिवासी संगठन के अनुराग मोदी बताते हैं कि ओड़ीशा के नियामगिरी में बॉक्साइट के खनन पर सुप्रीम कोर्ट ने 2013 में रोक लगा दी थी, क्योंकि माइनिंग कॉर्पोरेशन ने खनन के लिए ग्राम सभा की मंजूरी नहीं ली थी. जब 12 ग्राम सभाओं ने मंजूरी नहीं दी, तब माइनिंग कॉर्पोरेशन को खनन बंद करना पड़ा था. जबकि यहां जुलाई 2016 से ही कई गांवों में परमाणु खनिज निदेशालय से मंजूरी के बिना आदिवासियों की निजी जमीन, खेत और जंगल में खनन कार्य हो रहे हैं. इसके लिए न तो ग्राम पंचायत की परमिशन ली गई और न ही आदिवासियों की जमीन पर खुदाई से पहले उन्हें कोई जानकारी दी गई. खनन क्षेत्र के आस-पास कोई नोटिस बोर्ड भी नहीं लगा है. सरकारी अधिकारी खनन-कार्य में पूरी गोपनीयता बरत रहे हैं. अब ग्रामीण भी खनन-कार्यों का विरोध करने के लिए एकजुट होने लगे हैं. उन्होंने चेतावनी दी है कि ग्राम सभा व उनकी मंजूरी के बिना क्षेत्र में यूरेनियम की खोज नहीं करने देंगे. जुलाई 2017 में आदिवासियों ने यूरेनियम खनन के विरोध में एक बड़ी रैली निकाली. वे अपने खेतों को घेरकर खड़े हो गए. मजबूरी में अधिकारियों को मशीनें लेकर वापस लौटना पड़ा. ग्रामीणों ने इसके विरोध में कलेक्टोरेट में ज्ञापन भी दिया था.

उत्तर वन मंडल के वन मंडल अधिकारी संजीव झा बताते हैं कि परमाणु खनिज अन्वेषण एवं अनुसंधान निदेशालय (एएमडीईआर) को इस क्षेत्र में यूरेनियम के भंडार की जानकारी मिली थी. इसके बाद जिले के शाहपुर वन क्षेत्र की 989.076 हेक्टेयर क्षेत्र में यूरेनियम के खोज की अनुमति दी गई. यह क्षेत्र सतपुड़ा टाइगर रिजर्व व कॉरीडोर के निकट है. बैतूल में खनन कार्य के लिए 10 अलग-अलग स्थान की पहचान की गई है. हालांकि वन विभाग के अधिकारियों का कहना है कि निदेशालय से सर्वे का प्रस्ताव मिलने के बाद इसे राज्य सरकार को भेजा गया था, जहां से खोज की अनुमति मिलने के बाद ही खनन कार्य शुरू किया गया है. वहीं बैतूल के डीसी शशांक मिश्रा बताते हैं कि उन्हें इन क्षेत्रों में खनन कार्यों के बारे में कोई आधिकारिक सूचना नहीं मिली है. खापा पंचायत के ग्रामीणों द्वारा 20 अप्रैल को सौंपे गए ज्ञापन के बारे में भी उन्होंने अनभिज्ञता जाहिर करते हैं. खनन और भूतत्व विभाग के निदेशक विनीत आस्टिन भी बताते हैं कि उन्हें इस क्षेत्र में खनन कार्य के बारे में कोई जानकारी नहीं है. लेकिन उनका मानना है कि केंद्र सरकार को राज्य सरकार या स्थानीय प्रशासन से ऐसे खनन कार्यों के लिए किसी अनुमति की जरूरत नहीं पड़ती है. एएमडीईआर के क्षेत्रीय निदेशक ओपी यादव भी बताते हैं कि खोजपरक खनन कार्यों के लिए समुदायों की सहमति आवश्यक नहीं है. हां, माइनिंग साइट तय हो जाने के बाद ग्राम पंचायतों की सहमति जरूरी होती है. दूसरी तरफ, एएमडीईआर के अधिकारी खनन कार्यों की अनुमति के लिए खापा पंचायत के सरपंच का 14 अप्रैल, 2016 को हस्ताक्षर किया हुआ एक कागज दिखाते हैं. इसमें 200 मीटर के दायरे में ड्रिलिंग और खोजपरक कार्यों की अनुमति दी गई है. मंगला कल्ला बताते हैं कि एक सरपंच की सहमति दिखाकर सरकारी अधिकारी आस-पास के पंचायतों में भी गैर कानूनी तरीके से खनन-कार्य जारी रखे हैं. इसके लिए दो-तिहाई ग्रामीणों की सहमति जरूरी है, जबकि हस्ताक्षरयुक्त कागजात में सिर्फ 10 ग्रामीणों का ही नाम है.

आदिवासी हितों के संरक्षण के लिए कई संवैधानिक प्रावधान हैं. पांचवी और छठी अनुसूचियां राज्यपालों को विशेष शक्तियां प्रदान करती हैं, इसके बावजूद उनका शोषण बदस्तूर जारी है. 1996 में पारित पेसा कानून पंचायत एक्सटेंशन इन शेड्यूल एरिया ग्राम सभा को यह अधिकार देता है कि बिना उनकी अनुमति के आदिवासियों की जमीन का अधिग्रहण नहीं किया जा सकता है. वहीं 2006 का वन अधिकार कानून आदिवासियों को जंगल की भूमि पर निवास करने और वनोपजों पर एकाधिकार की मंजूरी देता है.

आदिवासियों की बदनसीबी कहें कि जिस जंगल में वे रहते हैं, वहां धरती लोहा, बॉक्साइट, यूरेनियम आदि खनिज पदार्थों को अपने गर्भ में छिपाए है. यही कारण है कि विकास की सबसे अधिक मार इन आदिवासियों को ही झेलनी पड़ रही है. आजादी के बाद से अब तक विकास के नाम पर किसानों की करीब 5 करोड़ एकड़ जमीन का अधिग्रहण किया गया है, जिसमें अधिकतर जमीन आदिवासियों की ही है. आदिवासियों के नाम पर जितनी धनराशि का आवंटन सरकारों ने किया है, अगर उसका अगर एक अंश भी उनपर खर्च हो जाता, तो हालात इतने बदरंग नहीं होते. दुर्भाग्य है कि इस धनराशि से नेताओं और सरकारी अधिकारियों का खूब विकास हुआ और आदिवासी अपने हाल पर छोड़ दिए गए. आज ये आदिवासी खुद को नहीं, बल्कि पूरी दुनिया के अस्तित्व की लड़ाई लड़ रहे हैं.

क्यों जरूरी है यूरेनियम की खोज

यूरेनियम का इस्तेमाल परमाणु बम बनाने और बिजली उत्पादन में होता है. भारत सरकार ने मई 2017 में देश भर में 10 न्यूक्लियर पावर प्लांट लगाने की मंजूरी दे दी है. अभी देशभर में 22 न्यूक्लियर पावर रिएक्टर हैं, जिनसे 3 प्रतिशत बिजली की आपूर्ति होती है. सरकार का लक्ष्य 2050 तक इसे बढ़ाकर 25 प्रतिशत तक करना है. भारत के पास इस समय दुनिया में मौजूद कुल यूरेनियम का मात्र 4 प्रतिशत भंडार मौजूद है. इसे देखते हुए झारखंड, ओड़ीशा, मध्यप्रदेश, तेलंगाना, महाराष्ट्र, छत्तीसगढ़ सूरजपुर तथा राजनांदगांव और मेघालय में यूरेनियम भंडार की खोज हो रही है. आंध्रप्रदेश के तम्मलपल्ली और झारखंड के जादूगोड़ा में यूरेनियम की बड़ी खदानें हैं. जादूगोड़ा (झारखंड) में 1967 से ही खनन कार्य जारी है. यहां से चार किमी की दूरी पर भातिन में यूरेनियम की दूसरी खदान है. जादूगोड़ा से ही 24 किलोमीटर दूर तुरामदिन में भी यूरेनियम मिला है.

एनएसजी की दादागीरी पर भारत की चाल

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के विदेश दौरों का एक मकसद यह भी होता है कि भारत को न्यूक्लियर सप्लायर्स ग्रुप में शामिल कर लिया जाए. परमाणु रिएक्टर के लिए यूरेनियम के निर्यात पर अभी एनएसजी के सदस्य देशों का नियंत्रण है. इन्हीं कारणों से भारत अपने यहां यूरेनियम खदानों की खोज पर जोर दे रहा है. परमाणु ऊर्जा आयोग के अध्यक्ष डॉ. शेखर बसु ने भी यूरेनियम संवर्धित परमाणु रिएक्टर्स के विस्तार पर जोर दिया है.■

थोरियम है देश का परमाणु ईंधन

दुनिया भर में उपलब्ध थोरियम का एक चौथाई भंडार भारत के पास है. नार्वे के अलावा किसी भी यूरोपियन देश में थोरियम का भंडार नहीं है. ईयू देशों को इस बात का डर है कि इससे यूरेनियम पर आधारित परमाणु रिएक्टरों पर उनकी दादागीरी खत्म हो जाएगी. यूरोपीय परमाणु अनुसंधान संगठन के सहयोग से 1999 में थोरियम रिएक्टर पर काम शुरू हुआ था. जैसे ही रिएक्टर शुरू होने की संभावना दिखी, ईयू ने इस परियोजना की फंडिंग पर रोक लगा दी. थोरियम पर आधारित रिएक्टर्स के लिए ईयू और अमेरिका जैसे देशों का वैज्ञानिक और तकनीकी सहयोग जरूरी है. लेकिन उन्हें डर है कि इससे यूरेनियम पर उनका एकाधिकार खत्म हो जाएगा और उनके धंधे में मंदी आ जाएगी. ईयू और विकसित देशों को इस बात का भी डर है कि ऐसा होने पर भारत प्रमुख थोरियम सप्लायर देश बन जाएगा. यही कारण है कि ये देश भारत की मदद के लिए तैयार नहीं हैं. परमाणु वैज्ञानिक बताते हैं कि अगर दुनिया को बचाना है तो हमें थोरियम आधारित रिएक्टर्स पर जोर देना होगा. इसमें प्रति इकाई यूरेनियम से 250 गुना ज्यादा ऊर्जा होती है और इससे निकला कचरा कहीं कम रेडियोधर्मी होता है.

तेलंगाना में आदिवासियों को जंगल का अतिक्रमणकारी बता परेशान करती पुलिस

दूसरे भोपाल त्रासदी की ओर बढ़ रहा देश

झारखंड के जादूगोड़ा स्थित यूरेनियम खदान को लेकर अमेरिकी समाचार एजेंसी ने रेडियोएक्टिव और जहरीले तत्व लीक होने की खबर प्रकाशित की थी. रिपोर्ट में इस बात का जिक्र था कि इस इलाके के आम जन, नदियां, जंगलों और खेती पर भी विकिरण का असर हो रहा है. रिपोर्ट में भारत के परमाणु प्रतिष्ठान पर आरोप लगाया गया कि रेडिएशन के खतरों की अनदेखी कर इन इलाकों में खनन कार्य किए जा रहे हैं. झारखंड विधानसभा में भी यूरेनियम खदानों से 160 प्रतिशत अधिक विकिरण का मामला उठा. विधायकों ने कहा कि अगर इस पर समय रहते ध्यान नहीं दिया गया, तो यह देश में दूसरी भोपाल त्रासदी को जन्म दे सकता है. जादूगोड़ा के फोटोग्राफर आशीष बिरूली यूरेनियम विकिरण से प्रभावित लोगों की तस्वीरें खींच लोगों को जागरूक करते हैं. संथाली में वे कहते हैं जादूगोड़ा उनू मो ताना यानी जादूगोड़ा डूब रहा है, उसे बचा लो. इलाके में विकिरण से प्रभावित मासूमों की तस्वीरें देखकर लोगों की आंखें भर आती हैं, लेकिन उनकी यह मार्मिक अपील गूंगे-बहरे सरकारी अधिकारियों तक शायद ही पहुंचे. राजस्थान के झुंझुनु में यूरेनियम खोज को लेकर खेतों में ड्रिलिंग की गई थी. स्थानीय विधायक शुभकरण चौधरी ने बताया कि क्षेत्र में यूरेनियम की खोज के लिए करीब 113 बोरवेल खोदे गए. इसके लिए प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड की मंजूरी भी नहीं ली गई. इन बोरवेल के कारण जमीन का पानी जहरीला हो गया है, जिससे आमजन से लेकर पशु व फसलों को भी नुकसान हो रहा है.

राष्ट्रीय मेडिकल आयोग

पढ़ाई और दवाई दोनों महंगे

देश के सभी निजी मेडिकल कॉलेज लाभ कमाने वाले संस्थान बन गए हैं. हर एडमिशन सत्र के समय, निजी मेडिकल कॉलेजों की फीस के नाम पर करोड़ों रुपए तक की उगाही की ख़बरों से अख़बार भरे रहते हैं. मौजूदा बिल में भी इस बात की गुंजाइश रखी गई है कि कॉलेज प्रबंधन अपने कोटे से दाखिला दे सकते हैं. इस प्रस्तावित बिल के मसौदे में डॉक्टरों की कमी को पूरा करने के लिए उच्च गुणवत्ता वाले डॉक्टर मुहैया कराने और अत्याधुनिक शोध को अपने कार्य में सम्मिलित करने के लिए फॉर-प्रॉफिट (लाभ कमाने वाले) मेडिकल कॉलेज खोलने का भी प्रस्ताव रखा गया है.

शफीक आलम

वित्त मंत्री अरुण जेटली की अध्यक्षता वाले केंद्रीय मंत्रियों के समूह (जीओएम) ने बदलाव के कुछ सुझावों के साथ राष्ट्रीय मेडिकल आयोग बिल (2017) के मसौदे को अपनी मंज़ूरी दे दी है. अब इस बिल को संसद की मंजूरी के लिए भेजा जाएगा. संसद की मंजूरी के बाद राष्ट्रीय मेडिकल आयोग, वर्ष 1956 ने पारित मेडिकल काउंसिल ऑफ़ इंडिया अधिनियम की जगह ले लेगा. इस मसौदे के खिलाफ इंडियन मेडिकल कौंसिल ने देश के अलग-अलग हिस्सों में विरोध कर इसके कई प्रावधानों पर अपनी आपत्ति दर्ज कराई थी. गौरतलब है कि पिछले वर्ष नीति आयोग के तत्कालीन उपाध्यक्ष अरविन्द पनगढ़िया की अध्यक्षता में बनी चार सदस्यीय समिति द्वारा राष्ट्रीय मेडिकल आयोग (एनएमसी) विधेयक का मसौदा तैयार किया गया था. इस विधेयक को सार्वजनिक कर इसपर आम जनता और मेडिकल व्यवसाय से जुड़े अलग-अलग हितधारकों से सुझाव मांगे गए थे.

देश में मेडिकल शिक्षा और उच्च गुणवत्ता वाले डॉक्टर मुहैया कराने, अत्याधुनिक शोध को अपने कार्य में सम्मिलित करने और मेडिकल संस्थाओं का समय-समय पर निरीक्षण करने से संबंधित कई प्रस्ताव इस नेशनल मेडिकल कमीशन में रखे गए हैं. नए विधेयक के मुताबिक, एमबीबीएस ग्रेजुएट्स को डॉक्टरी की प्रैक्टिस का लाइसेंस हासिल करने के लिए एक एग्जिट परीक्षा पास करनी होगी. ये परीक्षा पोस्ट-ग्रेजुएट कोर्सज में दाखिले के लिए नेशनल एलिजिबिलिटी टेस्ट (नीट) का भी काम करेगी. इस विधेयक में चार स्वायत बोर्ड गठित करने का प्रावधान किया गया है. स्नातक और स्नातकोत्तर शिक्षा के संचालन, मेडिकल संस्थानों की रेटिंग और निरीक्षण, डॉक्टरों का रजिस्ट्रेशन और मेडिकल एथिक्स को लागू करना होगा इस बोर्ड की जिम्मेदारी होगी. हालांकि नीति आयोग द्वारा तैयार किए गए मसौदे में आयोग के सदस्यों को मनोनित करने पर जोर दिया गया था. इसपर देश के अलग-अलग हिस्सों के डॉक्टरों ने एतराज जताया था, उसके बाद जीओएम ने इस प्रावधान में बदलाव करते हुए इसमें कुछ चयनित सदस्यों को भी शामिल करने की शिफारिश की.

इस विधेयक के पारित हो जाने के बाद इससे देश में मेडिकल शिक्षा पर दूरगामी प्रभाव तो पड़ेगा, लेकिन इससे स्वास्थ्य सेवाओं में किसी विशेष बदलाव की गुंजाइश नज़र नहीं आ रही. आज आवश्यकता इस बात की है कि देश में सबको गुणवत्तापूर्ण स्वास्थ्य सेवा उपलब्ध कराई जाए. देश के अलग-अलग हिस्सों से आने वाली स्वास्थ्य सेवा सम्बन्धी ख़बरों पर एक सरसरी नज़र डालने से ही ये अंदाज़ा हो जाता है कि स्थिति कितनी बदहाल है. इन खबरों द्वारा सामने आए सवालों का जवाब मौजूदा विधेयक के मसौदे में नहीं है. देश में ग्रामीण स्तर

पर स्वास्थ्य सेवा तो पहले से ही चरमराई हुई है. इधर व्यवसायीकरण ने इलाज इतना मंहगा कर दिया है कि गरीब आदमी किसी निजी अस्पताल में इलाज करवाने की सोच भी नहीं सकता है. निजी अस्पतालों में गरीबों के लिए मुफ्त इलाज का जो प्रावधान है, उसे भी अस्पताल प्रबंधन ने पैसे कमाने की लालच में छीन लिया है. इस काम में देश के बड़े-बड़े और प्रसिद्ध अस्पताल शमिल हैं. पिछले साल दिल्ली के पांच निजी अस्पतालों (मैक्स सुपर स्पेशलिटी हॉस्पिटल, फोर्टिस एस्कॉर्ट्स हार्ट इंस्टिट्यूट, शांति मुकुंद हॉस्पिटल, धर्मशीला कैंसर हॉस्पिटल और पुष्पावती सिंघानिया रिसर्च इंस्टिट्यूट) पर 600 करोड़ रुपए का जुर्माना लगाया गया था. इन अस्पतालों पर आरोप था कि उन्होंने आर्थिक रूप से कमज़ोर तबके के मरीजों का इलाज करने से इंकार कर दिया था. लेकिन इस जुर्माने के बाद भी हालात बदले नहीं हैं. अस्पतालों द्वारा इलाज से इंकार की खबरें या इलाज में लापरवाही या केवल पैसे ऐठने के लिए अनावश्यक इलाज के मामले अक्सर खबरों में रहते हैं. अस्पतालों के गैर-जिम्मेदाराना और अमानवीय व्यवहार की उस नंगी और हृदयविदारक तस्वीर को कौन भूल सकता है, जिसमे प्रशासन द्वारा एम्बुलेंस सुविधा मुहैया नहीं कराए जाने के कारण एक गरीब आदिवासी को अपनी मृत पत्नी के शव को 10 किलोमीटर तक कंधे पर ढोना पड़ा था. स्वास्थ्य सेवा को लेकर ये विधेयक खामोश है. एथिक्स की बात केवल शिक्षा के स्तर पर है. हालांकि ज़रूरत इस बात की है कि देश में सबके लिए स्वास्थ्य सेवा उपलब्ध कराई जा सके.

देश के सभी निजी मेडिकल कॉलेज लाभ कमाने वाले संस्थान बन गए हैं. हर एडमिशन सत्र के समय, निजी मेडिकल कॉलेजों की फीस के नाम पर करोड़ों रुपए तक की उगाही की ख़बरों से अख़बार भरे रहते हैं. मौजूदा बिल में भी इस बात की गुंजाइश रखी गई है कि कॉलेज प्रबंधन अपने कोटे से दाखिला दे सकते हैं. इस प्रस्तावित बिल के मसौदे में डॉक्टरों की कमी को पूरा करने के लिए उच्च गुणवत्ता वाले डॉक्टर मुहैया कराने और अत्याधुनिक शोध को अपने कार्य में सम्मिलित करने के लिए फॉर-प्रॉफिट (लाभ कमाने वाले) मेडिकल कॉलेज खोलने का भी प्रस्ताव रखा गया है. इस बिल में यह भी कहा गया है कि नेशनल मेडिकल कमीशन, निजी कॉलेजों के केवल 40 प्रतिशत सीटों के फीस को ही नियंत्रित करेगा. इसका मतलब यह होगा कि कॉलेज अपनी मर्जी से जितना फीस रखना चाहे रख सकते हैं. इसके लिए कमिटी ने यह दलील दी है कि यदि एनएमसी ने फीस नियंत्रित किया, तो निजी निवेशक कॉलेज खोलने में अपना पैसा लगाने से घबराएंगे और देश में मेडिकल शिक्षा के विस्तार का उद्देश्य नाकाम हो जाएगा.

अब सवाल यह उठता है कि फिलहाल जब देश में फॉर-प्रॉफिट मेडिकल कॉलेज खोलने का प्रावधान नहीं है, तब यहां कॉलेजों द्वारा फीस के नाम पर करोड़ों रुपये ऐंठे जा रहे हैं. लेकिन इन कॉलेजों को मनमानी फीस वसूलने की इजाज़त मिलने के बाद क्या स्थिति होगी, ये समझना मुश्किल नहीं है. व्यापम जैसे एडमिशन के दलालों का जो बाज़ार गर्म होगा, सो अलग. ज़ाहिर है, मेडिकल शिक्षा का खर्च बढ़ने से स्वास्थ्य सेवाएं और अधिक महंगी और गरीबों की पहुंच से दूर हो जाएंगी. सबसे महत्वपूर्ण ये कि जब कॉलेजों की फीस करोड़ों रुपए होगी, तो निम्न आय वर्ग की श्रेणी में आने वाली देश की 80 फीसदी से अधिक आबादी के लिए शिक्षा का यह विस्तार बेमानी हो जाएगा. पिछड़ी, अनुसूचित जाति और जनजाति के लोग इस फीस का बोझ बर्दाश्त नहीं कर पाएंगे.

अब रही बात गुणवत्ता की, तो इस सिलसिले में ये कहा जा सकता है कि जब प्राइवेट कॉलेज खोलने की बात चल रही थी, उस समय भी यही दलील दी जा रही थी कि ऐसा करने से शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार होगा. एक अध्ययन के मुताबिक, प्राइवेट कॉलेजों से पास होने वाले 80 फीसदी इंजीनियर किसी काम के नहीं हैं. इस विधेयक में इस तथ्य का समाधान ये निकाला गया है कि एमबीबीएस पास करने वाले हर विद्यार्थी को प्रैक्टिस लाइसेंस हासिल करने के लिए एक अखिल भारतीय टेस्ट में बैठना होगा. अब सवाल ये उठता है कि जब किसी छात्र ने परीक्षा उत्तीर्ण कर ली, तो उसी तरह की परीक्षा से गुज़रने का क्या औचित्य है? ऐसे मेडिकल कॉलेज ही क्यों खुलने दिए जाएं, जहां शिक्षा की गुणवत्ता में शक की गुंजाइश हो? ये भी एक तथ्य है कि मेडिकल में दाखिले के लिए अभिभावकों को बच्चों की कोचिंग पर लाखों रुपए खर्च करने पड़ते हैं. अब इस सम्भावना से भी इंकार नहीं किया जा सकता है कि एमबीबीएस की पढ़ाई में लाखों रुपए खर्च करने के बाद इस टेस्ट को पास करने लिए भी कोचिंग का कारोबार शुरू हो जाएगा.

कुल मिला कर देखा जाए, तो यह कहा जा सकता है कि इस विधेयक से स्वास्थ्य सेवाओं में सुधार हो या न हो, स्तरीय मेडिकल कॉलेजों की बाढ़ आ जाने की पूरी गुंजाइश है. नतीजतन, मेडिकल जैसी उच्च शिक्षा गरीब और वंचित वर्ग के छात्रों की पहुंच से दूर हो जाएगी, दूसरी ओर गरीब मरीज़ इलाज के बिना मरते रहेंगे.■

जम्मू-कश्मीर में धारा-35 (ए) पर विवाद

भाजपा को छोड़कर तमाम पार्टियां बेचैन

हारून रेशी

कश्मीर के राजनीतिक एवं सामाजिक क्षेत्रों में इन दिनों भारत के संविधान की धारा-35 (ए) पर विवाद छिड़ा हुआ है. जुलाई के महीने में अटॉर्नी जनरल ने सुप्रीम कोर्ट को बताया था, 'भारत सरकार चाहती है कि इस धारा पर बहस होनी चाहिए.' बस इसी एक वाक्य ने कश्मीर में सनसनी फैला दी. सरकार से आशा थी कि वो इस धारा की रक्षा के लिए खड़ी होगी. लेकिन जब सरकार ही इसको समाप्त करने या न करने के विषय पर बहस छेड़ना चाहती है, तो इसका लाभ निश्चय ही उनको भी होगा, जिन्होंने न्यायालय में अर्जी दाखिल कर के 35 (ए) को समाप्त करने की मांग की है.

भाजपा पार्टी स्तर पर खुलेआम 35 (ए) को समाप्त करने की मंशा व्यक्त कर चुकी है. यही कारण है कि कश्मीर में इन दिनों एक आम धारणा है कि केंद्र सरकार इस धारा को समाप्त करने की तैयारियां कर रही है. केंद्र सरकार के इस कथित मंसूबे पर जम्मू और कश्मीर में भाजपा को छोड़कर तमाम राजनीतिक पार्टियां और उनके नेतागण बेचैन नजर आ रहे हैं. यहां तक कि मुख्यमंत्री महबूबा मुफ्ती ने पिछले दिनों दिल्ली में एक समारोह के दौरान कहा कि अगर 35 (ए) के साथ कोई छेड़छाड़ की गई, तो कश्मीर में राष्ट्रीय झंडा तिरंगा को थामने वाला कोई नहीं मिलेगा. राज्य की मुख्यमंत्री सच्चे मन के साथ जम्मू और कश्मीर को भारत का अटूट अंग मानती हैं और उन्होंने अपना सहयोग देकर भाजपा जैसी पार्टी को राज्य में सत्ता के गलियारे तक पहुंचाया है. उनके मुंह से निकले इन शब्दों को सुनकर मामले की नजाकत को समझा जा सकता है.

तीन बार राज्य के मुख्यमंत्री रह चुके फारूक अब्दुल्ला ने अपने एक ताजा बयान में नई दिल्ली को सावधान किया कि अगर 35 (ए) को समाप्त किया गया, तो कश्मीर में वो होगा, जो आज तक कभी नहीं हुआ है. उनका संकेत एक बहुत बड़ी बगावत की शंका की ओर था. भाजपा को छोड़कर राज्य की मुख्यधारा की तमाम राजनीतिक पार्टियां धारा 35 (ए) की रक्षा के लिए एकजुट नजर आ रही हैं. अलगाववादी संगठनों ने भी इसके साथ किसी प्रकार की छेड़छाड़ की स्थिति में 'भयानक परिणाम' आने की धमकी दी है. जम्मू और कश्मीर में माकपा के सचिव मोहम्मद युसूफ तारिगामी, पीपुल्स डेमोक्रेटिक फ्रंट के चेयरमैन हकीम मोहम्मद यासीन और डेमोक्रेटिक पार्टी नेशनलिस्ट के नेता गुलाम हसन मीर ने 9 अगस्त को मुख्यमंत्री से मुलाकात की. इन सभी ने मुख्यमंत्री को सलाह दी कि राज्य की विपक्षी पार्टियों के नेतागण एवं बुद्धिजीवियों के एक प्रतिनिधिमंडल को तुरंत नई दिल्ली भेजा जाय, ताकि वे प्रधानमंत्री से मुलाकात कर उन्हें 35 (ए) को समाप्त करने की किसी भी कोशिश के संभावित परिणाम के प्रति आगाह कर सकें. इससे एक दिन पहले मुख्यमंत्री महबूबा मुफ्ती ने स्वयं फारूक अब्दुल्ला के घर जाकर उनसे इस समस्या पर बात की थी. साफ जाहिर है कि भाजपा को छोड़कर शेष तमाम राजनीतिक पार्टियां एवं नेतागण 35 (ए) की रक्षा के लिए एकमत हैं.

35 (ए) क्या है – 35 (ए) को वास्तव में जम्मू-कश्मीर राज्य को विशेष दर्जा देने वाली धारा-370 के आधार पर संविधान में शामिल किया गया है. 35 (ए) संविधान की वो धारा है, जिसके अंतर्गत जम्मू और कश्मीर के स्टेट सब्जेक्ट कानून को सुरक्षा प्राप्त है. सहज रूप से समझना हो, तो कहा जा सकता है कि संविधान की इसी धारा के कारण किसी दूसरे राज्य के निवासी को जम्मू और कश्मीर में सरकारी नौकरी नहीं मिल सकती. इसी के कारण किसी भी दूसरे राज्य के निवासी को जम्मू-कश्मीर की विधानसभा एवं पंचायत चुनाव में वोट डालने का अधिकार नहीं है और दूसरे राज्य का कोई भी व्यक्ति जम्मू और कश्मीर में भूमि नहीं खरीद सकता. इसी धारा के कारण किसी भी दूसरे राज्य के छात्र को जम्मू-कश्मीर के किसी व्यावसायिक महाविद्यालय या दूसरे किसी शैक्षिक संस्थान में दाखिला नहीं मिल सकता और न ही राज्य सरकार के किसी फंड या सहायता से अन्य राज्य के छात्र को छात्रवृत्ति मिल सकती है. सबसे अहम बात ये है कि जब तक धारा 35 (ए) संविधान

में शामिल है, किसी भी दूसरे राज्य का व्यक्ति जम्मू-कश्मीर में कोई सम्पत्ति नहीं खरीद सकता. इसी कानून की वजह से जम्मू और कश्मीर के निवासियों को वे सुविधाएं व अधिकार हासिल हैं, जो अन्य राज्यों के निवासियों को हासिल नहीं हैं. ये कानून वास्तव में जम्मू और कश्मीर के विशेष दर्जे का एक बहुत बड़ा आधार है. इस धारा को पंडित जवाहरलाल नेहरू ने 1954 में स्वयं संविधान में शामिल कराया था, ताकि जम्मू और कश्मीर की जनता को भरोसा दिलाया जा सके कि भारत सरकार उनके विशेष दर्जे को बरकरार रखना चाहती है. 35 (ए) को राष्ट्रपति के आदेश के द्वारा भारत के संविधान में शामिल किया गया था.

भाजपा का नजरिया – भाजपा न सिर्फ 35 (ए) बल्कि उस धारा-370 को भी समाप्त करना चाहती है, जिसके कारण जम्मू और कश्मीर को विशेष संवैधानिक दर्जा हासिल है. धारा-370 को समाप्त करने का वादा भाजपा के राष्ट्रीय चुनावी एजेंडे में भी शामिल है. भाजपा का मानना है कि जम्मू-कश्मीर का विशेष दर्जा छीने जाने के बाद ये राज्य भी देश के दूसरे राज्यों की तरह हो जाएगा. 2014 में जब केंद्र सरकार भाजपा के हाथों में आ गई, तो इसके कुछ ही दिनों बाद संघ के एक थिंक टैंक, कश्मीर स्टडी सेंटर ने आरटीआई की एक पेटिशन देते सुप्रीम कोर्ट में अपील की कि धारा 35 (ए) को समाप्त किया जाय. पिछले महीने इस मुकदमे की सुनवाई के दौरान भारत सरकार के वकील ने न्यायालय को बताया कि सरकार इसपर बहस कराना चाहती है. दूसरे शब्दों में कहें तो, सरकार भी मुकदमा करने वाले थिंक टैंक का समर्थन कर रही है. अगर ये सब कुछ हुआ, तो अदालत एक ही बार में धारा 35 (ए) को समाप्त कर सकती है. यही कारण है कि सरकार ने सुप्रीम कोर्ट में इसपर बहस करने की बात कही है. इससे जम्मू और कश्मीर में सनसनी फैली हुई है. राजनीतिक विश्लेषकों का कहना है कि अब ये सिर्फ कश्मीर घाटी का ही मामला नहीं है, लद्दाख और जम्मू का भी है. धारा 35 (ए) को समाप्त किए जाने का जो नतीजा सामने आएगा, वो लद्दाख एवं जम्मू के निवासियों को भी भुगतना पड़ सकता है. इस धारा के समाप्त हो जाने के बाद भारत के विभिन्न राज्यों से लाखों करोड़ों लोग इस राज्य में आकर सम्पत्ति खरीद सकते हैं और यहां स्थायी निवासी के रूप में रह सकते हैं. चूंकि राज्य की अपनी आबादी कम है, इसलिए आने वाले कुछ वर्षों या कुछ दशकों में यहां अन्य राज्यों के निवासी ही बहुसंख्यक होंगे.

विश्लेषक एवं पत्रकार सिब्ते मोहम्मद हसन कहते हैं, 'ये जम्मू और कश्मीर से जुड़ी एक ऐसी समस्या है, जिसपर तमाम सूबों अर्थात घाटी, जम्मू एवं लद्दाख के लोगों की एक ही राय हो सकती है. कल्पना करें कि भारत के विभिन्न राज्यों से 10 लाख लोग आकर लद्दाख क्षेत्र में बस जाते हैं और यहां पर सम्पत्ति एवं भूमि खरीद लेते हैं, तो इस स्थिति में लद्दाख के असल निवासियों की पहचान कैसे बाकी रह सकती है. यही स्थिति घाटी एवं जम्मू के साथ भी हो सकती है. धारा 35 (ए) की समाप्ति के बाद अगर ये स्थिति कुछ वर्षों में नहीं होगी, तो कुछ दशकों में जरूर हो जाएगी. इस तरह से तीनों क्षेत्रों के लोगों की पहचान खत्म होकर रह जाएगी.' जहां तक मेरी जानकारी का सम्बन्ध है, तीनों क्षेत्रों के गंभीर विचार रखने वाले लोग इस मामले पर एक ही तरह से बेचैन हैं. यही कारण है कि भाजपा को छोड़कर बाकी तमाम राजनीतिक पार्टियां 35 (ए) की सुरक्षा में खड़ी हो गई हैं. हालांकि निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि धारा 35 (ए) के साथ किसी भी प्रकार की छेड़छाड़ की स्थिति में सबसे अधिक प्रतिक्रिया कश्मीर घाटी से ही आएगी. वरिष्ठ पत्रकार एवं दैनिक चट्टान के सम्पादक ताहिर मोहिउद्दीन ने इस विषय पर चौथी दुनिया के साथ बात करते हुए कहा कि 'मेरे विचार से, इस मामले पर घाटी भर में एक भयानक आंदोलन होगा, जिसपर काबू पाना मुश्किल होगा. परन्तु प्रश्न उठता है कि केंद्र में स्थित भाजपा सरकार 35 (ए) को समाप्त करने का मन बना चुकी है, तो इसे रोकने का क्या उपाय हो सकता है. इस समय जम्मू और कश्मीर में विपक्ष एवं अलगाववादियों की ओर से केंद्र सरकार के इस मंसूबे के लिए जुबानी जमा खर्च से ही काम लिया जा रहा है. क्या इन पार्टियों के पास आने वाले तूफान को रोकने के लिए कोई मंसूबा और रणनीति भी है? ये आने वाला समय ही बता पाएगा.■

धर्मान्तरण निषेध विधेयक धर्म पर पहरा

प्रशान्त शरण

झारखंड सरकार ने सूबे में धर्म पर पहरा लगा दिया है. अब अगर कोई स्वेच्छा से भी धर्म परिवर्तन करना चाहेगा, तो उसे लंबी प्रक्रिया से गुजरना होगा. इस विधेयक पर मंत्रिमंडल की मुहर लग चुकी है और इसे मानसून सत्र में ही पारित कराने का राज्य सरकार मन बना चुकी है. लालच देकर या जबरन धमका कर धर्म परिवर्तन कराने के मामले में, इस विधेयक में चार साल जेल की सजा के अलावे जुर्माने का भी प्रावधान है. अगर वह अनुसूचित जाति या जनजाति का नहीं है, तो ऐसे मामले में तीन साल की सजा और पचास हजार रुपए का प्रावधान है. इसे गैर जमानतीय अपराध माना गया है. इसमें ये भी कहा गया है कि अगर अनुसूचित जाति और जनजाति के किसी व्यक्ति का धर्मान्तरण कराया जाता है, तो ऐसे में चार साल की सजा और एक लाख रुपए तक का जुर्माना हो सकता है. अगर कोई व्यक्ति स्वेच्छा से धर्म परिवर्तन करना चाहता है, तो उसे सम्बन्धित जिले के उपायुक्त से अनुमति लेनी होगी, बिना अनुमति के अगर कोई धर्मान्तरण करता है तो इसके विरुद्ध कठोर कार्रवाई की जाएगी. किसी भी समुदाय के नाबालिग का धर्मान्तरण अवैध माना जाएगा. राज्य सरकार अंधविश्वास को बढ़ावा देने वाले कार्यक्रमों पर भी रोक लगाने की तैयारी कर रही है, इसके लिए भी एक सख्त कानून लाने की बात कही जा रही है.

मुख्यमंत्री रघुवर दास जबरन धर्मान्तरण पर रोक लगाने को जरूरी मानते हैं. मुख्यमंत्री का कहना है कि देश के अन्य राज्यों में भी इस तरह का कानून लागू है. गृह विभाग ने देश के अन्य भागों में लागू इस तरह के कानूनों का अध्ययन करने के बाद ही इस विधेयक का प्रारूप तैयार किया है. वैसे यह बिल भाजपा की प्राथमिकता सूची में शामिल था. मुख्यमंत्री रघुवर दास भी पार्टी के दबाव में कई मौकों पर धर्मान्तरण विधेयक लाने का आश्वासन दे चुके थे. चुनाव की तिथि नजदीक आते देख भाजपा ने यह हिन्दू ट्रंप कार्ड चलकर 21 प्रतिशत आदिवासियों को अपने पक्ष में गोलबंद करने के लिए मुहिम तेज कर दिया है.

धर्मांतरण की आधारशीला तभी रखी गई थी, जब आजादी के पूर्व रांची के समीप मैकलुस्कीगंज में अंग्रेजों ने अपना ठिकाना बनाया था. यहां सैकड़ों एंग्लो-इंडियन परिवार रहते थे, धीरे-धीरे यहां चर्च की स्थापना हुई. मिशनरी ने शिक्षा एवं स्वास्थ्य के क्षेत्र में काम करना शुरू किया, वह भी सुदूरवर्ती इलाकों में जहां सरकार की पहुंच भी नहीं हो पाती थी, ईसाई मिशनरियों ने सेवा भावना से काम शुरू किया. अविभाजित बिहार के दक्षिण बिहार में बहुत ज्यादा गरीबी थी, खासकर आदिवासियों की स्थिति तो और दयनीय थी. दाने-दाने को लोग मोहताज थे, गरीबी और बीमारी से जूझ रहे थे. कुपोषण की समस्या भी चरम पर थी. अशिक्षित तो थे ही, इसका ही फायदा ईसाई मिशनरियों ने उठाया. उन्होंने सुदूरवर्ती जंगली इलाकों में भी शिक्षण संस्थान और अस्पताल खोले. गरीबों को आर्थिक मदद के साथ ही खाद्य सामग्री भी उपलब्ध कराया. इन सब से गरीब आदिवासी इनसे प्रभावित हुए. इसके बाद इनलोगों ने गरीब और अशिक्षित आदिवासियों को धर्मान्तरण कराकर मसीही बनाना शुरू किया. जंगली इलाकों में आदिवासी क्रिश्चयन बनने की होड़ में शामिल हो गए और इनकी जनसंख्या लगभग 6 प्रतिशत हो गई. गुमला, सिमडेगा, चाईबासा, लोहरदगा, सरायकेला-खरसांवा जिलों में तो ईसाइयों की संख्या में लगातर बढ़ोतरी होती रही.

मिशनरियों की सक्रियता देख हिन्दू संगठनों खासकर संघ परिवार भी सक्रिय हुआ और धर्मान्तरण को रोकने की कोशिश की. इसे लेकर कई जगह मिशनरी और हिन्दू संगठनों में टकराव भी हुए थे. संघ परिवार ने धर्म परिवर्तन कराए गए लोगों की पुन: घर वापसी के लिए कई कार्यक्रम भी चलाए. छत्तीसगढ़ के जशपुर महाराजा दिलीप सिंह जूदेव ने तो धर्मान्तरण का विरोध करने, इस पर रोक लगाने और घर वापसी के लिए गुमला को अपना कर्मक्षेत्र ही बना लिया था. संघ परिवार से सम्बन्ध रखने वाले जूदेव काफी हद तक सफल भी रहे थे. झारखंड के गांवों में एकल विद्यालय और सरस्वती शिशु मंदिर खोले गए. संघ परिवार धर्मान्तरण पर काबू पाने में असफल रहा, तो सरकार पर दबाव बनाना शुरू किया. लेकिन भाजपा यहां जब भी सत्ता में रही, उस समय गठबंधन की सरकार थी. इस बार भाजपा को पूर्ण बहुमत मिला, तो हिन्दू संगठन रघुवर सरकार पर दबाव बनाने लगे. रघुवर दास ने भी कई मौकों पर संगठन को आश्वस्त किया था कि सरकार इसके लिए विधेयक लाएगी.

ऐसी चर्चा है कि भाजपा सरकार ने आगामी चुनावों को देखते हुए यह हिन्दू कार्ड चला है, क्योंकि भाजपा को इसका भली-भांति अहसास है कि 'हिन्दुत्व' ही चुनावी नैया पार करा सकता है. पिछले लोकसभा चुनाव में हिन्दुत्व के सहारे ही नरेन्द्र मोदी ने उम्मीद से कहीं ज्यादा सीटें हासिल की थी. उसके बाद उत्तर प्रदेश में हिन्दुओं के गोलबंद होने के बाद मिली सफलता से तो भाजपा अतिउत्साह में है. झारखंड में भाजपा की सरकार द्वारा धर्म पर पहरा लगाने के लिए धर्मान्तरण विधेयक लाने से ईसाई समुदाय में उबाल है और इसका खामियाजा झारखंड को भुगतना पड़ सकता है. भाजपा सरकार ने झारखंड को एक बार फिर बांटने का काम कर सूबे को बारूद के ढेर पर खड़ा कर दिया है. झामुमो, कांग्रेस, राजद एवं बाबूलाल मरांडी की पार्टी सहित दर्जनों संगठन इस विधेयक का खुलकर विरोध कर रहे हैं. उन्होंने इसे लोकतंत्र पर हमला बताते हुए कहा है कि भाजपा सरकार मुस्लिम तानाशाह की तरह व्यवहार कर मौलिक अधिकार छीन रही है. धर्म निरपेक्ष देश में इस तरह का कानून लाना तानाशाही को दर्शाता है. विपक्षी दलों ने यह आरोप लगाया है कि भाजपा सरकार संघ परिवार के एजेंडे पर काम कर रही है. इसके विरोध में राज्यव्यापी आंदोलन चलाया जाएगा.

इस विधेयक को लेकर मिशनरी संगठनों एवं धर्मगुरुओं में तो आक्रोश है ही, विपक्षी दल भी इसे लेकर सरकार को घेरने लगे हैं. ईसाई समुदाय ने इसे अपने ऊपर हमला बताया है, जबकि सरना आदिवासी जो हिन्दू धर्म मानते हैं, उनका मनोबल इससे बढ़ गया है. अब दोनों खुलकर सामने आ गए हैं. सरना आदिवासियों (हिन्दू) ने इस बिल का समर्थन करते हुए कहा है कि धर्मान्तरण बिल का विरोध करने वालों का सेंदरा (हत्या) कर दिया जाएगा. केन्द्रीय सरना समिति ने कहा कि विरासत में मिली स्वशासन व्यवस्था को पूर्ण रूप से संचालित करने के लिए सरना चारी हुजीर का गठन किया गया है. सरना समिति ने कहा कि जो भी इस विधेयक का विरोध करेगा, उसे गांव में नहीं घुसने दिया जाएगा और उसकी हत्या कर दी जाएगी. सरना आदिवासियों ने तो यहां तक कह दिया कि धर्मान्तरित व्यक्तियों को अनुसूचित जनजाति का लाभ नहीं दिया जाय, साथ ही उन्हें पंचायत चुनाव में भी आरक्षण से वंचित रखा जाय. सरना समिति का यह भी कहना है कि अगर लोग धर्मान्तरण करते हैं तो इन्हें गोत्र भी छोड़ देना चाहिए. वहीं इस मामले में आदिवासी सेना का रुख सरना समिति से अलग है. उन्होंने कहा है कि रघुवर सरकार खुद को आदिवासियों का हितैषी बताती है, लेकिन आदिवासियों की धार्मिक, सामुदायिक एवं जंगल की 21 लाख एकड़ जमीन को परती बताकर पूंजीपतियों को दे रही है. सेना ने इस बात से इंकार किया कि मिशनरी जबरन धर्मान्तरण कराती है. उनका कहना है कि झारखंड में ईसाइयों की संख्या 1951 में 4.12 प्रतिशत और 1961 में 4.35 प्रतिशत थी, वहीं 2011 में यह 4.30 प्रतिशत रही. इससे स्पष्ट होता है कि झारखंड में धर्मान्तरण जैसी कोई समस्या नहीं है.

इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता है कि रघुवर सरकार ने धर्मान्तरण विधेयक लाकर भावनाओं के साथ तो खिलवाड़ किया ही, राज्य को फिर से बारूद की ढेर पर लाकर खड़ा कर दिया है. पहले से ही सीएनटी एवं एसपीटी एक्ट को लेकर झारखंड में उबाल है. राज्य सरकार ने इस आग में घी डालने का ही काम किया है. ■

feedback@chauthiduniya.com

विरोधियों ने एक सुर में किया विधेयक का विरोध

इस विधेयक को लेकर सभी विरोधी दलों ने एक सुर से मुख्यमंत्री रघुवर दास पर हमला बोला है. राज्य के पूर्व मुख्यमंत्री एवं झारखंड विकास मोर्चा के सुप्रीमो बाबूलाल मरांडी ने कहा है कि यह जनता के मौलिक अधिकारों पर हमला है. उन्होंने कहा कि सरकार ने धर्मान्तरण कानून लाकर नागरिकों के मौलिक अधिकारों पर कुठाराघात किया है. यह स्वतंत्रता पर हमला है. मरांडी ने कहा कि भाजपा की सरकार कानून और संविधान मानने के लिए तैयार नहीं है, वे हमेशा कानून की धज्जियां उड़ाते रहे हैं. संविधान में यह स्पष्ट है कि कोई भी व्यक्ति, कोई भी धर्म स्वीकार करने के लिए स्वतंत्र है. जबरन धर्म परिवर्तन को लेकर दंड का प्रावधान पहले से ही है. आईपीसी की धारा-15 एवं 295-ए के तहत सजा का प्रावधान है. वहीं विधानसभा में प्रतिपक्ष के नेता एवं पूर्व मुख्यमंत्री हेमंत सोरेन ने कहा है कि यह विधेयक खास वर्ग को प्रताड़ित करने के लिए लाया जा रहा है. यह एक सोची-समझी साजिश है. क्या अब सरकार और मजिस्ट्रेट यह तय करेंगे कि लोग कौन सा धर्म अपनाएं. मुख्यमंत्री ने संवैधानिक संस्थाओं को अपनी पॉकेट का संस्था बना दिया है. उन्होंने कहा कि इस विधेयक का पूरे राज्य में विरोध किया जाएगा और उनकी पार्टी इसे वापस लेने के लिए सड़क से लेकर सदन तक आंदोलन करेगी.

धार्मिक स्वतंत्रता बरकरार रहनी चाहिए: कार्डिनल पी टोप्पो

झारखंड में ईसाइयों के सबसे बड़े धर्मगुरु कार्डिनल तेलस्फोर पी टोप्पो ने इस मामले पर सीधे तौर पर टिप्पणी करने से इंकार कर दिया है. हालांकि उन्होंने कहा कि सरकार न्याय करती है तो ठीक है, अगर अन्याय होगा तो गलत होगा. जो हमलोगों पर जबरन या लोभ लालच से धर्मान्तरण का आरोप लगाते हैं, वे अपनी गलती महसूस करेंगे, हम झूठे आरोपों पर क्यों अपनी प्रतिक्रिया दे. उन्होंने कहा कि पूरी दुनिया में अंत:करण की आजादी है, देश में भी हर व्यक्ति की धार्मिक स्वतंत्रता है. ईश्वर ने मनुष्य को स्वतंत्र इच्छाशक्ति एवं बुद्धि दी है. उन्होंने सवालिया लहजे में कहा कि हमारे शिक्षण संस्थानों में ज्यादातर गैर मसीही विद्यार्थी पढ़ते हैं, क्या इन सबों का धर्मान्तरण किया गया है या किया जाता है. यह सवाल उनसे पूछना चाहिए जो नियम बना रहे हैं. मैंने अब तक कभी भी या किसी को जबरन इसाई बनाया गया हो, यह नहीं सुना है. मसीही संगठनों का कहना है कि जबरन धर्म परिवर्तन को लेकर पहले से ही संविधान के तहत कड़े कानून बने हुए हैं, तो इस तरह का बिल लाने की क्या आवश्यकता आ पड़ी. इस कानून का पूरी तरह से दुरुपयोग होगा और निर्दोष लोग प्रताड़ित होंगे, क्योंकि इसे गैर-जमानतीय अपराध माना गया है.

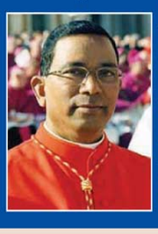

आधार एक फौजी योजना है जो विश्व व्यापार से भी जुड़ी है

डॉ गोपाल कृष्ण

भारत में एक अजीब रिवाज चल पड़ा है. दुनिया के विकसित देश जिस योजना को खारिज कर देते हैं, हमारी सरकार उसे सफ़लता की कुंजी समझ बैठती है. अनूठा पहचान (यूआईडी)/आधार संख्या परियोजना इसकी ताजा मिसाल है. मोटे तौर पर 'आधार' तो बारह अंकों वाली एक अनूठी पहचान संख्या है, जिसे देशवासियों को सूचीबद्ध कर उपलब्ध कराया जा रहा है. लेकिन यही पूरा सच नहीं है. असल में यह 16 अंकों वाला है, जिसमें से 4 अंक छुपे रहते है. सरकार की इस परियोजना के कई रहस्य अभी भी उजागर नहीं हुए है. इसी के आलोक में देखें, तो चुनाव आयोग और यूआईडीएआई द्वारा गृह मंत्रालय को भेजी गई सिफारिश कि मतदाता पहचान पत्र को यूआईडी के साथ मिला दिया जाय, चुनावी पर्यावरण को बदलने की एक कवायद है. ये एक बार फिर इस बात को रेखांकित करती है कि बायोमैट्रिक प्रौद्योगिकी और इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीन (ईवीएम) का इस्तेमाल उतना निर्दोष और राजनीतिक रूप से तटस्थ चीज नहीं जैसा कि हमें दिखाया जाता है. ध्यान देने वाली बात ये है कि चुनाव आयोग की वेबसाइट के मुताबिक, हर ईवीएम में यूआईडी होता है. मायावती, अरविन्द केजरीवाल सहित 16 सियासी दलों ने ईवीएम के विरोध में तो देरी कर ही दी, अब वे बायोमैट्रिक यूआईडी/आधार के विरोध में भी देरी कर रहे हैं. यही नहीं, राज्यों में जहां इन विरोधी दलों की सरकार है, वहां वे अनूठा पहचान यूआईडी/आधार परियोजना को बड़ी तत्परता से लागू कर रहे हैं.

यह ऐसा ही है, जैसे अमेरिकी डेमोक्रेटिक पार्टी के राष्ट्रपति जब पहली बार शपथ ले रहे थे, तो उन्हें यह पता ही नहीं चला कि वे जिस कालीन पर खड़े थे वो उनके परम विरोधी पूंजीपति डेविड कोच की कम्पनी इन्विस्ता द्वारा बनाई गई थी. डेविड कोच ने ही अपने संगठनो के जरिए पहले उन्हें उनके कार्यकाल के दौरान गैर चुनावी शिकस्त दी और फिर बाद में चुनावी शिकस्त भी दी. भारत में भी विरोधी दल जिस बायोमैट्रिक यूआईडी/आधार और यूआईडी युक्त ईवीएम की कालीन पर खड़े है, वह कभी भी उनके पैरो के नीचे से खिंची जा सकती है. लोकतंत्र में विरोधी दल को अगर आधारहीन कर दिया जाता है, तो इसका दुष्परिणाम जनता को भोगना पड़ता है, क्योंकि ऐसी स्थिति में उनके लोकतांत्रिक अधिकार छीन जाते हैं.

ईवीएम के अलावा जमीन के पट्टे संबंधी विधेयक में जमीन के पट्टों को अनूठा यूआईडी/आधार से जोड़ने की बात शामिल है. यह सब हमारे संवैधानिक अधिकारों का अतिक्रमण होगा. प्रौद्योगिकी आधारित सत्ता प्रणाली की छाया लोकतंत्र के मायने ही बदल रही है. प्रौद्योगिकी और प्रौद्योगिकी कंपनियां नियामक नियंत्रण से बाहर हैं, क्योंकि वे सरकारों, विधायिकाओं और विरोधी दलों से हर मायने में कहीं ज्यादा विशाल और विराट हैं. यूआईडी/आधार और नैटग्रिड एक ही सिक्के के अलग-अलग पहलू हैं. ये एक ही रस्सी के दो सिरे हैं. विशिष्ट पहचान/आधार संख्या सम्मिलित रूप से राजसत्ता और कंपनिया विभिन्न कारणों से नागरिकों पर नजर रखने का उपकरण हैं. यह परियोजना न तो अपनी संरचना में और न ही अमल में निर्दोष है. हैरत की बात यह भी है कि एक तरफ गांधी जी के चंपारण सत्याग्रह के सौ साल पूरे होने पर सरकारी कार्यक्रम हो रहे हैं, वहीं हमारी सरकार, एशिया के लोगों के बायोमैट्रिक निशानदेही आधारित पंजीकरण के खिलाफ गांधी जी के पहले सत्याग्रह और आजादी के आन्दोलन के सबक को भूल गई है. गांधी जी ने उंगलियों की निशानदेही द्वारा पंजीकरण कानून को काला कानून कहा था और सम्बंधित दस्तावेज को सार्वजनिक तौर पर जला दिया था. चीनी निवासी भी उस विरोध में शामिल थे.

ऐसा लगता है जैसे चीन को यह सियासी सबक याद रहा, मगर भारत भूल गया. चीन ने बायोमैट्रिक निशानदेही आधारित पहचान अनूठा परियोजना को रद्द कर दिया है. गौरतलब है कि कैदी पहचान कानून, 1920 के तहत किसी भी कैदी के उंगलियों के निशान को सिर्फ मजिस्ट्रेट की अनुमति से लिया जाता है और उनकी रिहाई पर उंगलियों के निशान के रिकॉर्ड को नष्ट करना होता है. कैदियों को होने वाली सजा अब हर देशवासी को होगी. कैदियों के मामले में तो उनकी रिहाई के वक्त उनकी पहचान को नष्ट करने का प्रावधान रहा है, लेकिन देशवासियों के पूरे शारीरिक हस्ताक्षर को रिकॉर्ड में रखा जा रहा है. बावजूद इसके, जानकारी के अभाव में देशवासियों की सरकार के प्रति आस्था धार्मिक आस्था से भी ज्यादा गहरी प्रतीत होती है. सरकार जो कि जनता की नौकर है, वो जनता को अपारदर्शी बना रही है.

10 अप्रैल, 2017 को रवि शंकर प्रसाद ने राज्यसभा में आधार पर चर्चा के दौरान बताया कि सरकार नैटग्रिड और बायोमैट्रिक आधार को नहीं जोड़ेगी. ऐसी सरकार जिसने आधार को गैरजरूरी बता कर देशवासियों से पंजीकरण करवाया और बाद में उसे जरूरी कर दिया, उसके किसी भी ऐसे आश्वासन पर कैसे भरोसा किया जा सकता है. जनता इतनी तो समझदार है ही कि वो यह तय कर सके कि कंपनियों के समूह फिक्की और एसोचैम की रिपोर्ट और मंत्री की बातों में से किसे ज्यादा विश्वसनीय माना जाय. इन्हीं कंपनियों के समूहों में वे गुमनाम चंदादाता भी शामिल हैं जो ज्यादा भरोसेमंद हैं, क्योंकि उन्हीं के भरोसे सत्तारूढ़ सियासी दलों का कारोबार चलता है. फिक्की और एसोचैम की रिपोर्ट से स्पष्ट है कि नैटग्रिड और बायोमैट्रिक आधार संरचनात्मक तौर पर जुड़े हुए हैं. वैसे भी ऐसी सरकार, जो स्वैच्छिक कह कर लोगों को पंजीकृत करती है और धोखे से उसे अनिवार्य कर देती है, उसके आश्वासन पर कौन भरोसा कर सकता है. इस हैरतंगेज सवाल का जवाब किसी के पास नहीं है कि देशवासियों की पहचान के लिए यूआईडी/आधार संख्या की जरूरत को कब और कैसे स्थापित कर दिया गया. पहचान के संबंध में यह 16वां प्रयास है.

चुनाव आयोग प्रत्येक चुनाव से पहले यह घोषणा करता है कि यदि किसी के पास मतदाता पहचान पत्र नहीं है, तो लोग अन्य 14 दस्तावेजों में से किसी का प्रयोग कर सकते हैं. ये वे पहचान के दस्तावेज हैं, जिनसे देश में प्रजातंत्र एवं संसद को मान्यता मिलती है. ऐसे में इस 16वें पहचान की कवायद का कोई ऐसा कारण नजर नहीं आता जिसे लोकशाही में स्वीकार किया जाए. संसद में पेश की गई अपनी रिपोर्ट में वित्त विभाग की संसदीय समिति ने खुलासा किया है कि सरकार ने इस 16वें पहचान के अनुमानित खर्च का पहले के पहचान पत्रों से कोई तुलना नहीं किया है. देशवासियों को अंधकार में रखकर बायोमैट्रिक-डिजिटल पहलों से जुड़े हुए उद्देश्य को अंजाम दिया जा रहा हैं. ज्ञात हो कि इस समिति ने सरकार के जवाब के आधार पर यह अनुमान लगाया है कि एक आधार संख्या जारी करने में औसतन 130 रुपए का खर्चा आता है, जो देश के प्रत्येक 130 करोड़ लोगों को भुगतान करना पड़ेगा. बायोमैट्रिक यूआईडी नीति को नागरिक जीवन (सिविल लाइफ) के लिए समीचीन बताकर 14 विकासशील देशों में संयुक्त राष्ट्र अमेरिका की कंपनियों और विश्व बैंक के जरिए इसे लागू किया जा रहा है. दक्षिण एशिया में यह पाकिस्तान में लागू हो चुका है और नेपाल और बांग्लादेश में भी लागू किया जा रहा है. भारत में इस बात पर कम ध्यान दिया गया है कि विराट स्तर पर सूचनाओं को संगठित करने की ये धारणा किस तरह से चुपचाप सामाजिक नियंत्रण, युद्ध के उपकरण और जातीय समूहों को निशाना बनाने और प्रताड़ित करने के हथियार के रूप में विकसित हुई है. विशिष्ट पहचान प्राधिकरण, 2009 के औपचारिक निर्माण से अस्तित्व में आई यूआईडी/आधार परियोजना, जनवरी 1933 (जब हिटलर सत्तारूढ़ हुआ) से लेकर दूसरे विश्वयुद्ध और उसके बाद के दौर की याद ताजा कर देती है. इंटरनेशनल बिजनेस मशीन्स (आईबीएम) नाम की दुनिया की सबसे बड़ी टेक्नॉलाजी कम्पनी ने नाजियों के साथ मिलकर यहूदियों की संपत्तियों को हथियाने और उन्हें नारकीय शिविरों में महदूद कर देने का काम किया. उन्हें देश से भगाने और आखिरकार उनके सफाए के लिए पंच-कार्ड (कम्प्यूटर का पूर्व रूप) का प्रयोग किया गया. इन कार्डों के माध्यम से जनसंख्या के वर्गीकरण की प्रणाली के जरिए यहूदियों की निशानदेही की गई. इसने मानवीय विनाश के मशीनीकरण को सम्भव बनाया. यह एक ऐतिहासिक तथ्य है.

इसे लेकर खासतौर पर जर्मनी और आमतौर पर यूरोप के अनुभवों को नजरअंदाज किया गया. 2010-2011 का बजट संसद में पेश करते हुए तत्कालीन वित्तमंत्री ने फरमाया कि यूआईडी परियोजना वित्तीय योजनाओं को समावेशी बनाने और सरकारी सहायता (सब्सिडी) जरूरतमंदों तक ही पहुंचाने के लिए उनकी निशानदेही करने का मजबूत मंच प्रदान करेगी. जबकि यह बात दिन के उजाले की तरह साफ है कि निशानदेही के यही औजार बदले की भावना से किन्हीं खास धर्मों, जातियों, क्षेत्रों या आर्थिक रूप से असंतुष्ट तबकों के खिलाफ भी इस्तेमाल में लाए जा सकते हैं. आश्चर्य है कि आधार परियोजना के प्रमुख यानि वित्त मंत्री ने वित्तीय समावेशन की तो बात की, लेकिन गरीबों के आर्थिक समावेशन की नहीं. भारत में 1947, 1984 और 2002 में राजनीतिक कारणों से समाज के कुछ तबकों का अपवर्जन उनके जनसंहार का कारण बना. अगर एक समग्र अन्तः अनुशासनिक अध्ययन कराया जाए, तो उससे साफ हो जाएगा कि किस तरह निजी जानकारियां और आंकड़े जिन्हें सुरक्षित रखा जाना चाहिए था, वे हमारे देश में दंगाइयों और जनसंहार करने वालों को आसानी से उपलब्ध थे. भारत सरकार भविष्य की कोई गारंटी नहीं दे सकती. अगर नाजियों जैसा कोई दल सत्तारूढ़ होता है, तो क्या गारंटी है कि यूआईडी के आंकड़े उसे प्राप्त नहीं होंगे और वह बदले की भावना से उनका इस्तेमाल नागरिकों के किसी खास तबके के खिलाफ नहीं करेगा? एक तरह से जनवरी 1933 ही है, जनवरी 2009 से अप्रैल 2017 तक के निशानदेही के प्रयासों के सफर की मंजिल है. यूआईडी वही सब कुछ दोहराने का मंच है, जो जर्मनी, रूमानिया, यूरोप और अन्य जगहों पर हुआ, जहां वह जनगणना से लेकर नाजियों को यहूदियों की सूची प्रदान करने का माध्यम बना. यूआईडी का नागरिकता से कोई संबंध नहीं है, वह महज निशानदेही का साधन है. इस पृष्ठभूमि में, ब्रिटेन द्वारा विवादास्पद राष्ट्रीय पहचान पत्र योजना को समाप्त करने का निर्णय स्वागत योग्य है, क्योंकि यह फैसला नागरिकों की निजी जिंदगियों में हस्तक्षेप से उनकी सुरक्षा करता है. पहचान पत्र कानून 2006 और स्कूलों में बच्चों की उंगलियों के निशान लिए जाने की प्रथा का खात्मा करने के साथ-साथ ब्रिटेन सरकार ने अपना राष्ट्रीय पहचान पत्र रजिस्टर बंद कर दिया है. इसकी आशंका प्रबल है कि आधार जो कि यूआईडी (विशिष्ट पहचान संख्या) का ब्रांड नाम है, इसके जरिए वही किया जाने वाला है, जो कि हिटलर के सत्तारूढ़ होने से पहले के जर्मन सत्ताधारियों ने किया. अन्यथा यह कैसे सम्भव था कि यहूदी नामों की सूची नाजियों के हाथ लग गई, जो उनके आने से पहले जर्मन सरकार के पास रहा करती थी? नाजियों ने यह सूची आईबीएम कम्पनी से प्राप्त की, जो कि जनगणना के व्यवसाय में पहले से थी. यह जनगणना नस्लों के आधार पर भी की गई थी, जिसके चलते न केवल यहूदियों की गिनती, बल्कि उनकी निशानदेही सुनिश्चित हो सकी. वाशिंगटन डीसी स्थित अमेरिका के होलोकास्ट म्यूजियम (विभीषिका संग्रहालय) में आईबीएम की होलोरिथ डी-11 कार्ड सार्टिंग मशीन आज भी प्रदर्शित है. इसी के जरिए 1933 की जनगणना में यहूदियों की पहले-पहल निशानदेही की गई थी.

भारतीय विशिष्ट पहचान प्राधिकरण ने एक जैवमापन मानक समिति (बायोमैट्रिक्स स्टैंडर्डस कमिटी) का गठन किया. ये समिति खुलासा करती है कि जैवमापन सेवाओं के निष्पादन के समय सरकारी विभागों और वाणिज्यिक संस्थाओं द्वारा प्रमाणिकता स्थापित करने का काम किया जाएगा. यहां वाणिज्यिक संस्थाओं को परिभाषित नहीं किया गया है. जैवमापन मानक समिति ने यह संस्तुति की है कि जैवमापक आंकड़े राष्ट्रीय निधि हैं और उन्हें उनके मौलिक रूप में संरक्षित किया जाना चाहिए. ये समिति नागरिकों के आंकड़ा कोष को राष्ट्रीय निधि अर्थात धन बताती है. यह निधि कब कंपनियों की निधि बन जाएगी, कहा नहीं जा सकता. ऐसे समय में जब बायोमैट्रिक आधार और कंपनी कानून मामले में कांग्रेस और भारतीय जनता पार्टी के बीच खिचड़ी पकती सी दिख रही है, आधार आधारित केंद्रीकृत ऑनलाइन डेटाबेस से देश के संघीय ढांचे को खतरा पैदा हो गया है. आधार आधारित व्यवस्था के दुरुपयोग की जबर्दस्त संभावनाएं हैं और यह आपातकालीन स्थिति तक पैदा कर सकने में सक्षम है. इससे देश के संघीय ढांचे का अतिक्रमण होता है और राज्यों के अधिकार और मौलिक व लोकतांत्रिक अधिकार कम होते हैं.

देश के 28 राज्यों एवं 7 केंद्र शासित प्रदेशों में से अधिकतर ने यूआईडीएआई के साथ समझौते पर हस्ताक्षर कर दिए हैं. राज्यों में वामपंथी पार्टियों की सरकारों ने इस मामले में दोमुहा रवैया अख्तियार कर लिया है. अपने राज्य में वे इसे लागू कर रहे हैं, मगर केंद्र में आधार परियोजना में अमेरिकी ख़ुफ़िया विभाग की संलिप्तता के कारण इसका विरोध कर रहे हैं. क्या उनके हाथ भी ठेके के बंटवारे के कारण बंध गए हैं? कानून के जानकार बताते हैं कि इस समझौते को नहीं मानने से भी राज्य सरकारों को कोई फ़र्क नहीं पड़ता, क्योंकि इसे लेकर कोई कानूनी बाध्यता नहीं है. पूर्व न्यायाधीश, कानूनविद और शिक्षाविद यह सलाह दे रहे हैं कि यूआईडी योजना से देश के संघीय ढांचे एवं संविधान प्रदत्त मौलिक अधिकारों के लिए गंभीर खतरा पैदा हो गया है. राज्य सरकारों, केंद्र के कई विभागों और अन्य संस्थाओं को चाहिए कि यूआईडीएआई के साथ हुए एमओयू की समग्रता में समीक्षा करें और अनजाने में अधिनायकवाद की स्थिति का समर्थन करने से बचें. राज्य और उनके नागरिक अपने अधिकारों को लेकर चिंतित हैं और केंद्रीकृत ताकत का विरोध करने में लगे हैं. लेकिन प्रतिगामी कनवर्जेंस इकनॉमी पर आधारित डेटाबेस और अनियमित सर्वेलेंस, बायोमैट्रिक व चुनावी तकनीकों पर मोटे तौर पर किसी की नजर नहीं जा रही है. उनके खिलाफ अभी-अभी आवाज उठना शुरू हुआ है. ठेका-राज से निजात पाने के लिए विशिष्ट पहचान/आधार संख्या जैसे उपकरणों द्वारा नागरिकों पर सतत नजर रखने और उनके जैवमापक रिकार्ड तैयार करने पर आधारित तकनीकी शासन की पुरजोर मुखालफत करने वाले व्यक्तियों, जनसंगठनों, जन आंदोलनों और संस्थाओं के अभियान का समर्थन करना एक तार्किक मजबूरी है. फिलहाल देशवासियों के पास अपनी संप्रभुता को बचाने के लिए आधार परियोजना का बहिष्कार ही एक मात्र रास्ता है. अगले चुनाव से पहले एक ऐसे भरोसेमंद विपक्ष की जरूरत है, जो यह लिखित वादा करे कि सत्ता में आने पर ब्रिटेन, अमेरिका और अन्य देशों की तरह भारत भी अपने वर्तमान और भविष्य के देशवासियों को बायोमैट्रिक आधार आधारित देशी व विदेशी खुफिया निगरानी से आज़ाद करेगा. ■

-लेखक, सिटीजन्स फोरम फॉर सिविल लिबर्टीज के सदस्य हैं.

केरल : इस राजनीतिक हिंसा की आग को हवा कौन देता है

रवीश कुमार

केरल की राजनीतिक हिंसा पर हिंदी प्रदेशों में सूचना कम है, धारणा ज़्यादा है. हिंसा को लेकर एक छवि बन गई है, मगर वहां के हालात की न तो कोई रिपोर्टिंग है या न किसी प्रकार की सूचना, जिससे वहां के हालात को समझने का मौका मिले. केरल की हिंसा पर रिसर्च करते हुए लगा कि स्थिति वाकई भयावह है. हिंसा के इस खेल में दोनों ही पक्ष शिकार भी हैं और शिकारी भी, यानि दोनों ही पक्षों के लोग मारे भी जा रहे हैं और एक दूसरे को मार भी रहे हैं. राजनीति तराजू लेकर नहीं की जाती है. इसलिए एक पक्ष खुद को ही पीड़ित के रूप में पेश करता है, अपने ख़िलाफ़ हुई हिंसा को उभारता है मगर आपको कभी नहीं बताता कि उसकी तरफ से भी हिंसा का यह खेल खेला गया है. केरल का एक ज़िला है कन्नूर. यहीं से राज्य के मुख्यमंत्री पिनाराई विजयन आते हैं. 1960 के दशक से यह ज़िला राजनीतिक हिंसा की गिरफ्त में है.

30 जुलाई को केरल की राजधानी तिरुवनंतपुरम में संघ कार्यकर्ता की हत्या कर दी गई. हत्या के आरोप में पांच लोग हिरासत में लिए गए. घटना के बाद गृहमंत्री राजनाथ सिंह ने केरल की हिंसा पर चिंता ज़ाहिर की थी और कहा था कि लोकतंत्र में राजनीतिक हिंसा स्वीकार्य नहीं है. 34 साल के राजेश को कई लोगों ने घेर कर मार दिया, उसका बायां हाथ काट दिया गया और उसे कई जगहों पर भयंकर चोटें आई हैं. बीजेपी ने इस हत्या के पीछे सीपीएम पर आरोप लगाया है. सीपीएम ने खंडन किया है. कांग्रेस के नेताओं ने हिंसा की इस राजनीति के ख़िलाफ़ उपवास रखा. केरल की हिंसा को लेकर मुख्यमंत्री पिनाराई विजयन ने एक बैठक भी बुलाई. बीजेपी आरएसएस के नेताओं से बात की और राजनीतिक मतभेद को दूर करने के उपायों पर बात की. बैठक शुरू होने से पहले मुख्यमंत्री ने आपा भी खो दिया और वहां आए मीडिया से गेट आउट कह दिया. बैठक के बाद बीजेपी और सीपीएम के नेताओं ने कहा कि वे हिंसा के ख़िलाफ जागरूकता लाएंगे. यह भी तय हुआ है कि बीजेपी आरएसएस और सीपीएम के काडर के बीच शांति वार्ता कई ज़िलों में आयोजित की जाएगी, ताकि आपसी संवाद बने.

केरल में हिंसा की यह कोई पहली घटना नहीं है, हिंसा के दौर के कई दशक बीत जाने के बाद सीपीएम, बीजेपी संघ के कार्यकर्ताओं की शांति बैठक से उम्मीद की जानी चाहिए. वर्ना हालत यह है कि दोनों पक्ष एक दूसरे पर हमला करने में एक मिनट भी नहीं सोचते हैं. बहरहाल, जो हिंसा 1960 के दशक से चली आ रही है, वो क्यों जारी है, इस पर रिसर्च करते हुए केरल का जो स्वरूप समझ में आता है वो भयानक है. हत्या सिर्फ हत्या नहीं बल्कि विभत्स तरीके से हत्या होती है. ऐसी कि आप हत्या का डिटेल नहीं बता सकते हैं. केरल की हिंसा हम सबके लिए शर्म की बात है और राज्य में सक्रिय राजनीतिक दलों के लिए तो और भी शर्म की बात है. हम चाहे खुद को अहिंसक कह लें, सहिष्णु कह लें, लेकिन इस तरह की घटनाएं भारत के इस खोखले गौरव से पर्दा उठा देती हैं.

30 जुलाई को संघ कार्यकर्ता की हत्या की गई, लेकिन केरल की हिंसा का रिकार्ड देखें, तो सीपीएम के कार्यकर्ता भी उसी तादाद में मारे जा रहे हैं. अगर संघ-बीजेपी के कार्यकर्ता मारे जाते हैं, तो आरोपी हमेशा सीपीएम के होते हैं और सीपीएम के कार्यकर्ता मारे जाते हैं, तो आरोपी हमेशा संघ-बीजेपी के होते हैं. कन्नूर की हिंसा की शुरुआत 1960 के दशक में भारतीय जनसंघ के कार्यकर्ता रामकृष्णन की हत्या से होती है. इस हत्या के बदले में सीपीएम कार्यकर्ता की हत्या कर दी जाती है. जिस तरह से तवे पर रोटी पलटते हैं, उसी तरह से कन्नूर में बदले की हिंसा होती है. ऐसा लगता है कि दोनों आदमी की लाश से फुटबाल खेलने के आदी हो गए हों.

- 11 जुलाई 2016 की रात साढ़े दस बजे कन्नूर में सीपीएम नेता सी वी धनराज की हत्या होती है. ढाई घंटे के अंदर ही रात एक बजे बदले की कार्रवाई में बीजेपी कार्यकर्ता और ऑटो रिक्शा ड्राइवर सी के रामचंद्रन की उसके ही घर में हत्या कर दी जाती है.
- 12 मई 2017 को धनराज की हत्या का आरोपी बीजू मार दिया जाता है.
- 11 जुलाई 2017, धनराज की हत्या की बरसी पर सीपीएम कार्यकर्ताओं पर बम से हमला होता है. थोड़ी देर बाद सीपीएम कार्यकर्ता एक संघ कार्यालय को फूंक देते हैं. दोनों पक्षों के 20 घरों में आग लगा दी जाती है.
- 20 अगस्त 2016 को बीजेपी कार्यकर्ता दीक्षित की बम बनाते वक्त मौत हो जाती है. वायर ने लिखा है कि संघ बीजेपी नेता विलसन थिल्लनेकीर ने टीवी की बहस में कहा कि जब राज्य फेल हो जाए, तो बचाव में बम बनाने पड़ते हैं.
- 20 सितंबर को थिल्लनेकेरी में बीजेपी वर्कर 26 साल के विनेश की हत्या होती है. इसी दिन इस हत्या के थोड़ी देर बाद सीपीएम के छात्र संगठन के जिजेश पर बम से हमला होता है. जिजेश पर स्थानीय संघ नेता की हत्या का आरोप था.
- 10 अक्टूबर को पिदुविलाई के सीपीएम नेता के मोहनन की हत्या होती है.
- 24 घंटे के भीतर 19 साल के बीजेपी वर्कर रीमिथ की हत्या कर दी जाती है.
- 19 मई 2016 को जब सीपीएम की सरकार बनी, तो विजय जुलूस पर बम फेंक दिया गया.
- सीपीएम समर्थक सी रविंदरण की हत्या हो जाती है. आरोप संघ पर लगता है.

इस पर रिसर्च करते हुए केरल का जो स्वरूप समझ में आता है वो भयानक है. हत्या सिर्फ हत्या नहीं बल्कि विभत्स तरीके से हत्या होती है. ऐसी कि आप हत्या का डिटेल नहीं बता सकते हैं. केरल की हिंसा हम सबके लिए शर्म की बात है और राज्य में सक्रिय राजनीतिक दलों के लिए तो और भी शर्म की बात है. हम चाहे खुद को अहिंसक कह लें, सहिष्णु कह लें, लेकिन इस तरह की घटनाएं भारत के इस खोखले गौरव से पर्दा उठा देती हैं.

केरल की हिंसा की कोई भी ख़बर देखिए. एक की हत्या होती है तो तुरंत उसका बदला हत्या से लिया जाता है. एक बात का ध्यान रखिएगा, समर्थक, नेता, कार्यकर्ता की हत्या हो रही है. कई जगहों पर हमने अगर समर्थक को नेता या कार्यकर्ता को नेता कह दिया हो तो इतनी ग़लती बर्दाश्त कर लीजिएगा. अगर किसी हत्या में सीपीएम या किसी हत्या में संघ का ज़िक्र आता है, तो उसका संदर्भ यह है कि उन पर शामिल होने का आरोप लगा है. अब आगे बढ़ते हैं. आपने पिछले साल के दो तीन महीनों की घटनाओं का रिकार्ड ऊपर देखा. साफ है कि दोनों पक्ष लाश की राजनीति कर रहे हैं. दिल्ली में भले ही एक पक्ष खुद को पीड़ित बताता हो, लेकिन मारे गए और आरोपों की सूची देखकर लगता है कि दोनों पाक साफ नहीं हैं. कन्नूर में 1960 के दशक से हिंसा जारी है और अब केरल के कई ज़िलों में फैल चुकी है.

एक आंकड़े के अनुसार कन्नूर की हिंसा में अब तक 210 लोग मारे गए हैं. दोनों तरफ से. एक आंकड़े के अनुसार कन्नूर की हिंसा में अब तक 300 से अधिक लोग मारे गए हैं. दोनों तरफ से. दि वायर में विश्व हिन्दू परिषद के एक आरोप को चुनौती दी गई है. विहिप का कहना है कि 300 से ज्यादा संघ समर्थक मारे गए हैं और आधे दलित हैं. बी आर पी भास्कर ने लिखा है कि यह सही नहीं हैं. 300 लोग मारे गए हैं मगर इसमें सीपीएम और संघ दोनों के हैं और आधे दलितों की बात सही नहीं है.

केरल की हिंसा पर रिसर्च करने वाली यूनिवर्सिटी ऑफ केप टाउन की लेक्चरर रुचि चतुर्वेदी ने लिखा है कि कन्नूर की हिंसा में थिय्या जाति के लोग मारे गए हैं. केरल में इस जाति को ओबीसी का दर्जा हासिल है. इनके पास बहुत कम ज़मीन है और साधारण परिवेश के लोग हैं. क्यों इस जाति के युवा दोनों तरफ की हिंसा में शामिल रहे हैं, शिकार हुए हैं, शिकार किया है, इस पर अलग से बात होनी चाहिए. रुचि ने कहा है कि हिंसा में मारे गए 80 फीसदी हिन्दू हैं और इसमें 70 फीसदी युवा बेरोज़गार थे. इसका मतलब यह नहीं कि इस हिंसा का कोई सांप्रदायिक रूप है. दिल्ली की मीडिया में या दिल्ली से केरल को लेकर कई तरह के प्रोपेगैंडा हो रहे हैं. डेली ओ डॉट इन पर मलयाली लोगों के एक समूह ने लिखा है. इस समूह को मीन अवियल कहते हैं. इनका दावा है कि इनके समूह में सभी दल के मलयाली लोग शामिल हैं.

इस समूह ने एक प्रोपेगैंडा को चुनौती दी है कि कन्नूर में 38 फीसदी मुस्लिम हैं. 2011 की जनगणना के अनुसार 29.43 प्रतिशत मुस्लिम हैं. एक प्रोपेगैंडा में कोट्टायम ज़िले को मुस्लिम बहुल बताया गया है, जबकि उस ज़िले में मुसलमानों की आबादी 6 प्रतिशत है.

क्या केरल की हिंसा का संबंध हिन्दू मुस्लिम राजनीति से है. इस तरह का प्रोपेगैंडा फैलाया जा रहा है, ताकि हिंदी भाषी प्रदेशों में ये बातें आसानी से फैल जाएं. सांप्रदायिक स्वरूप भी है, तो इस पर भी खुलकर बात हो सकती है. रुचि चतुर्वेदी ने लिखा है कि कन्नूर में 1983 से सितंबर 2009 के बीच 91 लोग मारे गए. संघ-बीजेपी के 31 समर्थक मारे गए हैं. सीपीएम के 33 समर्थक मारे गए हैं. क्या सिर्फ सीपीएम और संघ के समर्थक ही मारे गए? 14 मामलों में कांग्रेस के कार्यकर्ता भी मारे गए. ज़्यादातर में आरोप सीपीएम पर लगा. बीजेपी और कांग्रेस के कार्यकर्ता भी एक दूसरे की हत्या के आरोप में शामिल हैं. इंडियन मुस्लिम लीग और सीपीएम कार्यकर्ताओं ने भी एक दूसरे को मारा है. आरोप सीपीएम और संघ पर लगा, लेकिन मारे गए कार्यकर्ताओं में सीपीएम, संघ, बीजेपी, कांग्रेस और इंडियन मुस्लिम लीग के शामिल हैं. एक रिपोर्ट में एक और आंकड़ा है, जिसे पेश कर रहा हूं. केरल पुलिस के अनुसार 2000 से 2006 के बीच कन्नूर में 69 राजनीतिक हत्याएं हुई हैं. 31 संघ परिवार के मारे गए हैं और 30 सीपीएम के. पांच इंडियन मुस्लिम लीग के और 3 नेशनल डेमोक्रेटिक फ्रंट के.

कई बार मीडिया दोनों हत्याओं को दिखाकर विश्लेषण नहीं करता है. 30 जनवरी 2017 को कन्नूर में 63 साल के कांग्रेसी कार्यकर्ता पर संघ कार्यकर्ता हमला करते हैं. उस दिन शाम आठ बजे बीजेपी के 32 साल के साजिथ पर हमला होता है, हत्या हो जाती है और आरोप सीपीएम पर लगता है. केरल की मीडिया में दोनों घटनाओं की रिपोर्टिंग हुई लेकिन नेशनल मीडिया में सिर्फ संघ प्रचारक की हत्या को ही दिखाया गया और प्रोपेगैंडा किया गया. हिंसा-प्रतिहिंसा के इस दौर में पुलिस की भूमिका पर भी बात होनी चाहिए. क्या किसी घटना में दोनों पक्षों के आरोपियों को सज़ा हुई है.

हिन्दू में 19 दिसंबर 2016 की रिपोर्ट है. सीपीएम कार्यकर्ता की हत्या में 11 संघ कार्यकर्ताओं को आजीवन कारावास की सज़ा सुनाई जाती है. ट्रायल कोर्ट ने 2008 में सीपीएम नेता वी विष्णु की हत्या के आरोप में यह सज़ा सुनाई थी. हमने ये सब इंटरनेट सर्च के सहारे ही पाया है. सीपीएम नेताओं की गिरफ्तारियों की कई खबरें मिली हैं. 21 अप्रैल 2011 के टाइम्स ऑफ इंडिया में छपी खबर के अनुसार सेशन्स कोर्ट ने सीपीएम के 24 कार्यकर्ताओं को आजीवन कारावास की सज़ा सुनाई थी. संघ कार्यकर्ता के अंतिम संस्कार से लौट रहे दो लोगों की हत्या कर दी गई थी. ये घटना 23 मई 2002 की थी. इस तरह से आप देख रहे हैं कि केरल की हिंसा में कैसे राजनीतिक दलों को ख़ून लग गया है. आप तर्कों से इधर-उधर करते रहिए मगर सोचिए उस समाज के बारे में भी, जो इन दलों के हितों के लिए किसी की हत्या कर रहा है, मारा जा रहा है. साधारण परिवार के लोग आजीवन कारावास भुगत रहे हैं और इन दलों के नेता बड़े आराम से राजनीति चमका रहे हैं और दिल्ली में बैठकर प्रोपेगैंडा कर रहे हैं. राजनीतिक दल आम लोगों की ये हालत कर देते हैं. इसलिए ज़रूरी है कि केरल की हिंसा पर पूरे देश के सामने बात हो कि एक ज़िला क्यों इस तरह ख़ूनी प्रयोगशाला बना हुआ है. इनके सत्ता हासिल कर लेने से जनता का कौन सा कल्याण हो गया है. हत्या और हिंसा की इस राजनीति को खारिज कर देना चाहिए.

इंडिया टुडे की एक रिपोर्ट के मुताबिक मई 2016 में सीपीएम की अगुवाई वाली एलडीएफ़ सरकार के सत्ता में आने के बाद से कन्नूर में राजनीतिक हिंसा के 400 मामले सामने आ चुके हैं. इस रिपोर्ट के मुताबिक बीते तीन साल में राजनीतिक हिंसा में 30 फीसदी का इज़ाफ़ा हुआ है. हिंसा के इन मामलों में सीपीएम के 600 कार्यकर्ता, आरएसएस-बीजेपी के 300 कार्यकर्ता और कांग्रेस के 50 कार्यकर्ता गिरफ़्तार हो चुके हैं.

केरल से संबंधित रिपोर्ट और विश्लेषण पढ़ते वक्त दोनों पक्षों के नेताओं के बयान देख रहा था. सबको अपनी दलीलों पर इतना भरोसा है कि कोई अपनी ग़लती मानने के लिए तैयार नहीं है. सबके पास जायज़ कारण है कि हिंसा वो नहीं, सामने वाला कर रहा है. किसी में किसी भी पक्ष के मारे गए लोगों के प्रति संवेदना नहीं दिखती है. बदले की आग है. बदला लेना है और बदला ले लिया जाता है. उम्मीद की जानी चाहिए कि शांति कमेटियों और बैठकों का नतीजा निकलेगा. सीपीएम और संघ के कार्यकर्ता जब आमने-सामने बैठेंगे, तो एक दूसरे की नज़रों का लिहाज़ करेंगे और कुछ शर्म भी. प्रतिशोध की राजनीति ने कितनों को मरवा दिया और कितनों को जेल भिजवा दिया. एक तरफ से सवाल आएगा कि सीपीएम के दफ्तर पर संघ के लोगों ने बम क्यों फेंका तो दूसरी तरफ से सवाल आएगा कि संघ बीजेपी के दफ्तर पर सीपीएम के लोगों ने बम क्यों फेंका. आपसी राजनीति के लिए इतने बम कहां से आ जाते हैं, वो भी तब जब देश खुद को आतंकवाद से लड़ने वाला चैंपियन घोषित कर चुका है. क्या बमों पर लिखा होता है कि ये आतंकवाद के लिए है और ये राजनीतिक हत्या के लिए है. ■

(लेखक जाने माने टीवी पत्रकार हैं)

feedback@chauthiduniya.com

त्वरित समाधान देश के लिए दुखद है

कमल मोरारका

www.kamalmorarka.com

चीन के साथ डोकलाम का मुद्दा ज्यादा महत्वपूर्ण है, क्योंकि पहली बार चीन ने उस जगह को निशाना बनाया है, जहां तीन देशों की सीमा जुड़ती है. इससे पहले चीन ने ऐसा काम 1963 में किया था, जिसका नतीजा ये हुआ कि भूटान, भारत के करीब आ गया. जवाहरलाल नेहरू ने ये बयान दिया था कि उस घटना के बाद भूटान भारत के साथ है. चीन फिलहाल भूटान को डराकर उनकी सीमा में घुसना चाहता है, वहां लड़ाई चाहता है. मैं ये सोचकर परेशान होता हूं कि अगर सिक्किम भारत में नहीं होता, तो क्या होता?

सत्ता का घमंड साफ दिख रहा है. इधर कश्मीर में भाजपा आर्टिकल 35 ए हटाना चाहती है, ताकि गैर कश्मीरी भी कश्मीर में जमीन खरीद सकें. यहां दो तथ्य हैं. एक तो ये कि कोई व्यक्ति गंभीरता से अगर ये सोचता है कि इससे देश के बाकि हिस्सों से भारी संख्या में लोग पलायन कर कश्मीर चले जाएंगे, तो ऐसा सोचना किसी मजाक से कम नहीं है. कोई भी आदमी अपने घर से दस किलोमीटर दूर जाकर बसना नहीं चाहता. कश्मीर जाकर बसना तो बहुत दूर की बात है. दूसरी बात ये कि डोगरा के समय से ही, सिर्फ 370 की बात नहीं है, जमीन सिर्फ कश्मीरियों (जम्मू-कश्मीर) के लिए ही रही है. इसमें हिन्दू-मुस्लिम जैसी कोई बात नहीं रही है. जाहिर है, नागपुर से संचालित होने वाले लोग चाहते हैं कि कश्मीर पर हिन्दुओं का कब्जा हो जाए. आप क्या सोचते हैं कि हिन्दू कश्मीर में बहुमत में आ जाएंगे? जम्मू में तो बहुमत है.

आ ब यह साफ हो गया है कि भाजपा 2019 के चुनाव के लिए पूरी तरह से जुट गई है. इसे इस तरह से समझ सकते हैं कि गुजरात के महज एक राज्यसभा सीट को इतना बड़ा मुद्दा बनाने का कोई कारण नहीं था. कुल तीन सीटें थीं, दो भाजपा के पास, एक कांग्रेस के पास. चुनाव ऐसे ही होना चाहिए था, लेकिन भाजपा ने जिस तरीके से इस चुनाव को लिया, वो एक अलग ही कहानी है. अमित शाह और स्मृति ईरानी का चयन पक्का था. तीसरे उम्मीदवार के लिए उन्होंने कांग्रेस के एक विधायक को लालच देकर अहमद पटेल के सामने मैदान में उतार दिया. अगर दूसरे तरीके से देखें, तो अहमद पटेल शायद ही राज्यसभा में ज्यादा बोलते हों या मौजूद रहते हों. अहमद पटेल भाजपा के तर्कों और विचारों के लिए कोई खतरा नहीं हैं, यानि भाजपा इस चुनाव के जरिए दो चीजें स्थापित करना चाहती थी. एक तो ये कि इस सीट को जीत कर राज्य सभा में एक अतिरिक्त सीट हासिल की जाए, जिसका कोई खास महत्व नहीं है. दूसरा ये कि सोनिया गांधी के राजनीतिक सलाहकार की हार सुनिश्चित की जाए. नतीजे आने के बाद हुआ ये कि जो आदमी तीन साल पहले तक सोनिया गांधी का राजनीतिक सलाहकार था, वो अब गुजरात का लीडर बन गया है. आपने उस आदमी को दबाव में नेता बना दिया है. यह सब सत्ता की फुहड़ता और घमंड दिखाता है. प्रधानमंत्री ये सब बातें समझते हैं, मैं समझता हूं कि उन्होंने अमित शाह को बहुत ज्यादा फ्री हैंड दिया हुआ है. गुजरात में जो कुछ हुआ, उससे उन्हें कोई फायदा नहीं होने वाला है. इससे न गुजरात और न ही देश के बाकि हिस्सों में उन्हें कोई फायदा मिलने वाला है. खैर, देखते हैं कि आगे क्या होता है?

सत्ता का घमंड साफ दिख रहा है. इधर कश्मीर में भाजपा आर्टिकल 35 ए हटाना चाहती है, ताकि गैर कश्मीरी भी कश्मीर में जमीन खरीद सकें. यहां दो तथ्य हैं. एक तो ये कि कोई व्यक्ति गंभीरता से अगर ये सोचता है कि इससे देश के बाकि हिस्सों से भारी संख्या में लोग पलायन कर कश्मीर चले जाएंगे, तो ऐसा सोचना किसी मजाक से कम नहीं है. कोई भी आदमी अपने घर से दस किलोमीटर दूर जाकर बसना नहीं चाहता. कश्मीर जाकर बसना तो बहुत दूर की बात है. दूसरी बात ये कि डोगरा के समय से ही, सिर्फ 370 की बात नहीं है, जमीन सिर्फ कश्मीरियों (जम्मू-कश्मीर) के लिए ही रही है. इसमें हिन्दू-मुस्लिम जैसी कोई बात नहीं रही है. जाहिर है, नागपुर से संचालित होने वाले लोग चाहते हैं कि कश्मीर पर हिन्दुओं का कब्जा हो जाए. आप क्या सोचते हैं कि हिन्दू कश्मीर में बहुमत में आ जाएंगे? जम्मू में तो बहुमत है. आप जमीन खरीदने की अनुमति दे देंगे, तब भी आप बहुमत में नहीं आ पाएंगे. ये सब त्वरित (क्विक फिक्स) और मूर्खता भरा समाधान है. दुर्भाग्य से, ये लोग सत्ता में हैं और इनके कार्यकाल का तीन साल बीत चुका है. ये बहुत बड़ा समय है, जिसमें मोदी अपना काम सीख चुके होंगे. लेकिन, किसी डोभाल या बिपिन रावत की सलाह पर इस तरह के क्विक फिक्स समाधान देश के लिए दुखद हैं. यह देश इतना बड़ा है कि उसे इन ओछे तरीकों से नहीं चलाया जा सकता है.

चीन के साथ डोकलाम का मुद्दा ज्यादा महत्वपूर्ण है, क्योंकि पहली बार चीन ने उस जगह को निशाना बनाया है, जहां तीन देशों की सीमा जुड़ती है. इससे पहले चीन ने ऐसा काम 1963 में किया था, जिसका नतीजा ये हुआ कि भूटान, भारत के करीब आ गया. जवाहरलाल नेहरू ने ये बयान दिया था कि उस घटना के बाद भूटान भारत के साथ है. चीन फिलहाल भूटान को डराकर उनकी सीमा में घुसना चाहता है, वहां लड़ाई चाहता है. मैं ये सोचकर परेशान होता हूं कि अगर सिक्किम भारत में नहीं होता, तो क्या होता? अगर ऐसा नहीं हुआ होता, तो दार्जिलिंग को इसका खामियाजा भुगतना पड़ता और सिक्किम तो भुगत ही रहा होता. जिस तरह से सिक्किम का भारत के साथ विलय हुआ था, उससे सभी लोग पूरी तरह से सहमत नहीं हो सकते. लेकिन ये देशहित में था और इसका क्रेडिट इन्दिरा गांधी को दिया जाना चाहिए कि सिक्किम भारत के साथ शामिल हुआ. बहरहाल, सियासत में चीजें बदलती रहती हैं, जैसाकि किसी ने कहा है कि सच्चाई इस बात पर निर्भर करती है कि आप यरूशलम के किस हिस्से में रहते हैं.

जयराम रमेश ने हाल में एक बयान दिया है कि सल्तनत चली गई, लेकिन व्यवहार सुल्तान वाला ही रह गया है. लेकिन जयराम रमेश कौन हैं, वे भी उसी कांग्रेस के हिस्से हैं. सीनियर लीडर हैं, राहुल गांधी के करीबी हैं. उनकी बात सही हो सकती है, लेकिन उन्हें ये बात सार्वजनिक रूप से नहीं कहनी चाहिए थी. वे बात वो कांग्रेस वर्किंग कमिटी के भीतर रख सकते थे. उन्हें सोनिया गांधी से बात करनी चाहिए थी कि लोकतांत्रिक रूप से लोगों में अपनी पैठ बनानी चाहिए. लेकिन मुझे नहीं मालूम कि वहां क्या हो रहा है? दिग्विजय सिंह एक बेहद सौम्य, प्रभावी और बेहतरीन नेता हैं. उनके पर कतर कर कांग्रेस बार-बार उनका अपमान करती है. यह बहुत ही विचित्र मामला है कि कांग्रेस भाजपा की मदद कर रही है, भाजपा कांग्रेस की मदद करती है. ऐसा लगता है मानो दोनों एक दूसरे के लिए बने हैं.

नीतीश कुमार ने एक यू टर्न लिया है. इससे विपक्ष को धक्का लगा. नीतीश कुमार ने यही सोचा होगा कि विपक्ष उन्हें प्रधानमंत्री पद का उम्मीदवार नहीं मान रही है, इसलिए क्यों नहीं मुख्यमंत्री के तौर पर खुद को मजबूत बनाया जाए. उनके व्यक्तिगत विचार के मुताबिक ऐसा निर्णय सही हो सकता है. लेकिन वैचारिक और विपक्ष की राजनीति के हिसाब से देखें तो यह एक दुखद निर्णय था. शरद यादव उनके साथ जाते नहीं दिख रहे हैं. देखते हैं, आगे क्या होता है?

कुल मिलाकर, देश एक बहुत अच्छी स्थिति में नहीं है. सरकार ने नेशनल कंपनी लॉ ट्रिब्यूनल स्थापित किया है, बैंकरप्सी लॉ (दिवालिया कानून) ये सब अमेरिका की नकल है. ये सब भारत में काम नहीं करेगा. भारत में ऐसे लोग नहीं हैं, जो इसे समझ सकें. यदि कुल बकाया 56 लाख है और कंपनी सालाना करोड़ों रुपए का टर्नओवर दे रही है, तो क्या कंपनी बैंकरप्सी के लिए आवेदन करेगी? क्या इस तरह से बैंकरप्सी को समझा है? ये दिमाग का दिवालियापन बताता है. वित्त मंत्री और कॉरपोरेट मिनिस्टर को इस पर ध्यान देना चाहिए और एनसीएलटी को ट्रैक पर वापस लाना चाहिए. देखते हैं, क्या होता है? ■

feedback@chauthiduniya.com

कश्मीर के झंडाबरदारों के लिए ख़तरे की घंटी

शुजात बुख़ारी

पिछले 28 जुलाई को जब मुख्यमंत्री महबूबा मुफ़्ती ने भारतीय संविधान के अनुच्छेद-35 (ए) के साथ छेड़छाड़ का मुद्दा उठाया, तो उससे कई लोग आहत हुए. इसके अलावा, उनके बयान ने एक बार फिर गठबंधन सहयोगी भारतीय जनता पार्टी के रवैये की ओर सबका ध्यान आकर्षित किया, क्योंकि उसने इस संवेदनशील मुद्दे पर अपनी स्थिति केवल कागजों तक सीमित रखी थी. हालिया घटनाक्रम, जिसमे इस मुद्दे को सुप्रीम कोर्ट की एक बड़ी पीठ में चुनौती दी गई है, के संदर्भ में मेहबूबा ने चेतावनी दी थी कि अगर इस तरह की चुनौती जारी रही, तो कश्मीर में भारतीय तिरंगा को उठाने वाला कोई नहीं होगा. महबूबा के इस बयान पर तात्कालिक प्रतिक्रिया उनके गठबंधन सहयोगी बीजेपी की ओर से आई. प्रधानमंत्री कार्यालय के राज्य मंत्री जितेंद्र सिंह ने एक तरह से महबूबा के कथन को खारिज करते हुए कहा कि जम्मू-कश्मीर राज्य सहित हर जगह भारतीय तिरंगा लहराएगा. राज्य भाजपा इकाई ने उनके बयान पर प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए कहा कि अनुच्छेद-35 (ए) कोई बहुत पवित्र चीज़ नहीं है, जिसे छुआ न जा सके.

सुप्रीम कोर्ट में जो मामला चल रहा है, उसे एक गैर सरकारी संगठन जम्मू और कश्मीर स्टडी सेंटर द्वारा दायर किया गया है. यह एनजीओ भाजपा के वैचारिक स्रोत आरएसएस द्वारा चलाया जा रहा है. राज्य के ध्वज को चुनौती देने वाला एक अन्य मामला भाजपा नेता, पूर्व आईपीएस अधिकारी और वर्तमान में लक्षद्वीप के व्यवस्थापक फारूक खान द्वारा दर्ज कराया गया है. विडंबना यह है कि भाजपा ने राज्य की संवैधानिक स्थिति की सुरक्षा का आश्वासन देते हुए जम्मू और कश्मीर में पीपुल्स डेमोक्रेटिक पार्टी (पीडीपी) के साथ गठबंधन किया था और अब उसी ने न्याय का सहारा ले कर उसके खिलाफ युद्ध छेड़ रखा है. अभी सुप्रीम कोर्ट और हाई कोर्ट में धारा 370 की संवैधानिक स्थिति को चुनौती देने वाले छह मामले लंबित हैं. दरअसल, भाजपा ने अपने दोनों स्टैंड, 370 को समाप्त करने और पीडीपी के साथ गठबंधन के एजेंडे (एओए) में शामिल कश्मीर के विशेष दर्जे की हफाज़त करने, को बरकरार रखने की कोशिश की है. उसने एक तरफ जहां गठबंधन के एजेंडे (एओए) में शामिल कश्मीर की संवैधानिक स्थिति की रक्षा पर अपनी प्रतिबद्धता को बरकरार रखा है, वहीं दूसरी तरफ कोर्ट के माध्यम से इसे चुनौती भी दी है. यह पीडीपी और इसके वोटबैंक के साथ धोखा का एक स्पष्ट उदाहरण है. एओए के जरिए भाजपा ने सत्ता में भागीदारी हासिल की और एजेंडे में जो भी वचन दिया, उसपर कभी भी उसका विश्वास ही नहीं था. सत्ता के लिए उसने एक ऐसी पार्टी से समझौता किया, जो उसके विचारों से बिल्कुल विपरित है. ऐसा कर के भाजपा ने कश्मीर के लिए कुछ नहीं किया, लेकिन ये साफ कर दिया कि ये पार्टी भी वादा खिलाफी के मामले में कांग्रेस से अलग नहीं है. दिल्ली ने 1947 से जो रुख अपनाया है, उसे भाजपा ने मजबूती ही प्रदान की है.

महबूबा मुफ्ती के झंडे वाले बयान को जमीनी स्तर पर लोगों की प्रतिक्रिया से जोड़ कर देखना चाहिए, लेकिन वे इसे नहीं समझ पाएंगे. तो क्या इसका मतलब ये है कि पीडीपी एक ऐसी पार्टी को मान्यता दे रही है, जो उसी की अंतिम क्रियाकर्म करने पर तुली हुई है. पीडीपी को इस पर गंभीरता से विचार करना चाहिए. स्पेशल स्टेटस के साथ कोई भी छेड़छाड़ मुख्यधारा की पार्टियों को नेस्तनाबूद कर देगा और अंत में भाजपा बचेगी, चाहे जनता रहे न रहे.

महबूबा मुफ्ती ने दिल्ली की संगोष्ठी में जो कहा था, वो एक बड़ा राजनीतिक बयान था. निश्चित रूप से उस बयान ने भाजपा को असहज कर दिया था. यह बयान भाजपा के मुख्य एजेंडे को प्रभावित करता है. भाजपा 2019 के आम चुनावों तक अपनी ताकत बढ़ाने की कोशिश कर रही है और दुबारा सत्ता में आना चाहती है. शेष गैर-भाजपा शासित राज्यों को जीतना ही उसका एजेंडा है. मुश्किल सिर्फ जम्मू और कश्मीर है, जहां मुस्लिम बहुमत वाले राज्य में ये काम पीडीपी की सहायता से पूरा किया गया है.

कश्मीर पिछले दिनों जिस बदलाव से गुजरा है, उसपर बीजेपी ने ध्यान नहीं दिया है. बहुत अधिक सैन्य निर्भरता आतंकवाद को खत्म कर सकता है, लेकिन प्रभावी राजनीतिक भावना को भी खत्म करना इसकी नीति है. कश्मीर की राजनीतिक समस्या के समाधान से जुड़ी भावना को महत्वहीन बनाना इसका स्पष्ट सन्देश है. हालिया दिनों में राष्ट्रीय जांच एजेंसी (एनआईए) के माध्यम से अलगाववादी हुर्रियत कांफ्रेंस के नेताओं को फंसाने के लिए की गई कार्रवाई भाजपा की कश्मीर नीति का एक नमूना है. हालांकि, जो कानून का उल्लंघन करते हैं और मनी लॉन्ड्रिंग में लिप्त हैं, उनपर कार्रवाई में लापरवाही के लिए कोई जगह नहीं हो सकती है. लेकिन यहां पर ये प्रतीत होता है कि असंतोष का प्रतिनिधित्व करने वाले राजनीतिक आवाजों को खत्म करने के लिए इसे एक बड़ी रणनीति का हिस्सा बनाया गया है. कश्मीर का इतिहास इस तरह के उदाहरणों से भरा हुआ है. एक उदाहरण कश्मीर कांस्पिरेसी है, जिसमें नई दिल्ली पीछे हट गई थी और शेख मोहम्मद अब्दुल्ला को मुख्यधारा में लाने के उद्देश्य से उसे दबा दिया था.

यह एक तथ्य है कि पाकिस्तान ने कश्मीर में पानी की तरह पैसा बहाया है. न सिर्फ पाकिस्तानी पैसे ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है, बल्कि भारतीय धन ने भी कश्मीर को तबाह करने में कम बड़ी भूमिका नहीं निभाई है. हालांकि नरेंद्र मोदी की सरकार के आने के बाद आज हुर्रियत शक के दायरे में है, लेकिन तीन साल पहले ऐसा नहीं था. हुर्रियत को निशाना बना कर नई दिल्ली कट्टरपंथी तत्वों के लिए जगह बना रहा है, जो कश्मीर में हिंसा के आधार का विस्तार करना चाहते हैं. क्या उससे नई दिल्ली को कश्मीर मामले में सैन्य कार्रवाई को न्यायोचित साबित करने में मदद मिलेगी? शायद हां. हुर्रियत को एक अन्य राजनैतिक दृष्टिकोण के तौर पर देखा जा सकता है, लेकिन इस शर्त के साथ कि कोई भी कानून से बच नहीं सकता. लेकिन असहमति के स्वर को कुचलने के लिए बदले की भावना से भी कार्रवाई नहीं होनी चाहिए. राजनीति विचारों की लड़ाई है और इसे राजनीतिक रूप से लड़ा जा सकता है, प्रशासनिक उपायों द्वारा नहीं. महबूबा ने यह भी कहा कि एक विचार को जेल में नहीं डाला जा सकता और न ही उसे मारा जा सकता है. यह वो सच्चाई है, जो कश्मीर में व्यापत है.

किसी विशेष राजनैतिक विचारधारा को मार कर या पाबन्दी लगा कर भारत सरकार न खुद की और न ही भारत समर्थित कैंप की मदद कर रही है. यही बात महबूबा के झंडे वाले बयान में सामने आई. कश्मीर में भारत समर्थक पार्टियां भारत का झंडाबरदार हैं. नेशनल कॉन्फ्रेंस और पीडीपी की राजनीति राज्य के विशेष दर्जे में समाहित है. यही कारण है कि स्पेशल स्टेटस के साथ छेड़छाड़ उन्हें बेचैन कर देता है. यदि विशेष दर्जे के साथ छेड़छाड़ होता है, तो वो उन्हें अप्रसांगिक बना देगा. महबूबा ने सच कहा है कि वो फिर झंडे को उठाने की स्थिति में नहीं होंगी. पिछले कुछ सालों में ये देखा गया है कि मुख्य धारा की पार्टियों (एनसी-पीडीपी-कांग्रेस) के लिए कश्मीर में जनाधार कम हुआ है. जब महबूबा दिल्ली में बोल रही थीं, तो उन्होंने राज्य के स्पेशल स्टेटस की रक्षा के लिए एनसी के राज्य अध्यक्ष नासिर असलम वानी की ओर इशारा करते हुए एनसी से सहायता मांगी थी. दिल्ली के अडियल रवैये के कारण मुख्यधारा की पार्टियों का समर्थन कम हो रहा है. 7 अप्रैल को श्रीनगर संसदीय सीट के लिए हुए उपचुनाव ने यह स्पष्ट कर दिया कि उन्होंने कैसे अपनी जमीन खो दी है. अनंतनाग चुनाव का स्थगन इस वास्तविकता पर अपनी मुहर लगाता है. राज्य में भारत विरोधी भावनाओं की बाढ़ आ गई है. लेकिन नई दिल्ली इसे नहीं स्वीकारता, जिसकी वजह से मेनस्ट्रीम पार्टियों के समर्थन का दायरा सिकुड़ गया है. आईएसआईएस झंडे या किसी आतंकवादी द्वारा जारी वीडियो, जिसमें अलकायदा प्रमुख नियुक्त किया जा रहा है, को दिखाना ये साबित करता है कि ऐसे अवांछित तत्वों को प्रोत्साहित करने में किसी का हित छुपा हुआ है.

महबूबा मुफ्ती के झंडे वाले बयान को जमीनी स्तर पर लोगों की प्रतिक्रिया से जोड़ कर देखना चाहिए, लेकिन वे इसे नहीं समझ पाएंगे. तो क्या इसका मतलब ये है कि पीडीपी एक ऐसी पार्टी को मान्यता दे रही है, जो उसी की अंतिम क्रियाकर्म करने पर तुली हुई है. पीडीपी को इस पर गंभीरता से विचार करना चाहिए. स्पेशल स्टेटस के साथ कोई भी छेड़छाड़ मुख्यधारा की पार्टियों को नेस्तनाबूद कर देगा और अंत में भाजपा बचेगी, चाहे जनता रहे न रहे. ■

–लेखक राइजिंग कश्मीर के संपादक हैं.

feedback@chauthiduniya.com

संतोष भारतीय

जब तोप मुक़ाबिल हो

कांग्रेस के लोग ही लोकतंत्र को समाप्त करने के दोषी होंगे

कांग्रेस के लोग जयराम रमेश को नया कांग्रेसी बता रहे हैं. उनका कहना है कि 2004 में जयराम रमेश कांग्रेसी नहीं थे और अब वो कांग्रेस को अप्रासंगिक होने के खतरे गिना रहे हैं. लेकिन क्या जयराम रमेश के सवाल गलत हैं? इसका उत्तर कांग्रेस के लोग क्या देते हैं, नहीं पता, लेकिन इसका उत्तर जनता क्या देती है, ये ज्यादा महत्वपूर्ण है.

जिन सवालों को जयराम रमेश उठा रहे हैं, उन सवालों को भारतीय जनता पार्टी अमलीजामा पहना रही है. वो कांग्रेस के हर उस शख्स को अपने साथ लाने की योजना बना रही है, जो कांग्रेस को दोबारा खड़ा करने में योगदान दे सकता है. नीतीश कुमार का जाना भारतीय जनता पार्टी की सफलता नहीं है. ये लालू यादव की विफलता है, ऐसा माना जाना चाहिए. लेकिन जिस तरह से कांग्रेस के विधायकों को तोड़ने की कोशिश भारतीय जनता पार्टी कर रही है, उसकी चिंता कांग्रेस को क्यों नहीं हो रही है? अहमद पटेल का मामला अभी ताजा है. कांग्रेस के लोगों में एक बड़ी चिंता इस बात को लेकर है कि पार्टी का संगठन कहीं काम नहीं कर रहा है. देश का कोई भी राज्य ऐसा नहीं है, जहां का प्रदेश संगठन सचमुच कोई काम कर रहा हो. इस वर्ष होने वाले कर्नाटक के चुनाव कांग्रेस के लिए शायद वाटरलू या पानीपत का मैदान साबित हो सकते हैं. कांग्रेस को लगता है कि उसकी सत्ता कर्नाटक में बहुत मजबूत है, पर शायद ऐसा है नहीं. कर्नाटक का बैलेंस कुमार स्वामी के पास है या दूसरे शब्दों में देवेगौड़ा जी के पास है और उन्हें अपमानित करने में कांग्रेस कोई कसर बाकी नहीं रख रही है. देवेगौड़ा या कुमार स्वामी का अगर इसी तरह अपमान होता रहा, तो ये लोग जाने-अनजाने भारतीय जनता पार्टी के साथ जाने में हिचकेंगे नहीं.

उत्तर प्रदेश का संगठन मृतप्राय है? चुनाव से पहले राजबब्बर को कमान दे दी गई. राजबब्बर भीड़ बटोरते हैं, जाते हैं, घूमते हैं, दौड़ते हैं, पर संगठन खड़ा नहीं हो रहा है और इसका उत्तर कांग्रेस स्वयं नहीं तलाश रही है. बिहार का संगठन बर्बाद है. नीतीश कुमार की वजह से कांग्रेस को 40 सीटें मिल गईं, जिनमें 28 जीते. उनमें एक भी कोशिश कांग्रेस संगठन की नहीं थी. राजस्थान का कांग्रेस संगठन वैसा ही लुंज-पुंज है, लेकिन मध्यप्रदेश, राजस्थान या छत्तीसगढ़ में कांग्रेस को इस बात का फायदा है कि वहां सिर्फ और सिर्फ भारतीय जनता पार्टी के मुकाबले वो ही है और कोई तीसरी पार्टी है नहीं. आम आदमी पार्टी ने गुजरात और हिमाचल में चुनाव न लड़ने की घोषणा की है. शायद उन्होंने पहला सही कदम उठाया है.

लेकिन क्या कांग्रेस हिमाचल में चुनाव जीत पाएगी? क्या कांग्रेस गुजरात के आगामी चुनाव में भारतीय जनता पार्टी का मुकाबला कर पाएगी, ऐसा लगता नहीं है. शंकर सिंह वघेला को जिस तरह से कांग्रेस ने अपमानित कर निकाला और जिस तरह कांग्रेस वहां के तमाम विपक्षी लोगों से बातचीत नहीं कर रही है, नए उभरे पाटीदार नेताओं और दलित नेताओं से कांग्रेस का संपर्क नहीं है, ऐसी स्थिति को देखकर नहीं लगता कि कांग्रेस गुजरात में भारतीय जनता पार्टी से सत्ता छीन पाएगी. गुजरात में इस समय भारतीय जनता पार्टी की सरकार अपने पराभव पर है. लोगों में उसकी साख बहुत खराब है. इसके बावजूद क्या कांग्रेस वहां कुछ कर पाएगी?

लोगों के मन में एक छोटी सी आशा है. शायद प्रियंका गांधी लोकसभा चुनाव में कांग्रेस की कमान संभालें, तो कांग्रेस दोबारा लड़ने के स्तर पर आ जाए. वो ये भी कहते हैं कि प्रियंका गांधी के आते ही भारतीय जनता पार्टी सरकार रॉबर्ट वाड्रा के ऊपर, जो उनके पति हैं, शिकंजा कस लेगी और तब प्रियंका गांधी फिर आगे बढ़ने से हिचक जाएंगी. सवाल प्रियंका गांधी और राहुल गांधी का नहीं है. सवाल उस तरीके का है, जिसमें ये दोनों कार्यकर्ता की बात कुछ कम, कुछ ज्यादा सुनते तो हैं, लेकिन उस पर अमल करने में हिचक जाते हैं. सोनिया गांधी लोगों से बातें करती हैं, पर कोई प्रतिक्रिया नहीं देतीं. राहुल गांधी की प्रतिक्रिया किसी को समझ में नहीं आती. राहुल गांधी लोगों के नाम याद नहीं कर पाते.

मध्यप्रदेश में कांग्रेस चुनाव जीत सकती है. 15 साल का शिवराज सिंह सरकार का कार्यकाल इस बार उन्हें काफी अलोकप्रियता दे गया है. किसान आन्दोलन और जमीन पर विकास के कामों में ढिलाई इसके प्रमुख कारण हैं. कांग्रेस का अपना संगठन यहां चरमराया हुआ है. कांग्रेस के जो नेता दिल्ली की राजनीति करते हैं, वो मध्यप्रदेश में रुचि ही नहीं रखते. वे केवल चुनाव के दौरान जाएंगे. लोग कहते हैं वो हारी हुई भारतीय जनता पार्टी की सरकार मध्यप्रदेश में दोबारा बनवा देंगे. ओड़ीशा, छत्तीसगढ़, झारखंड, बिहार, उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश और राजस्थान को ही ले लें, हर जगह कांग्रेस संगठन बहुत बुरी हालत में है. इस संगठन की पूछ परख केन्द्र के नेता नहीं कर रहे हैं.

राहुल गांधी के पास क्यों वक्त नहीं है कि वो राज्यों के संगठन को चुस्त-दुरुस्त कर सकें या वो करना नहीं चाहते या उन्होंने ये मान लिया है कि वो 2022 के चुनाव में भारतीय जनता पार्टी का मुकाबला करेंगे और तब तक वो विश्वाटन करेंगे. मतलब विश्व पर्यटन करेंगे, दुनिया में घूमेंगे, सीखेंगे, समझेंगे, सबकुछ करेंगे, लेकिन वो अपने संगठन को मजबूत नहीं करेंगे. इस बार नौ अगस्त का भाषण देते हुए लोकसभा में सोनिया गांधी काफी कमजोर दिखाई दीं. शायद उनकी तबीयत खराब है. वो राहुल गांधी को सत्ता देना चाहती हैं, कांग्रेस अध्यक्ष बनाना चाहती हैं, लेकिन कांग्रेस पार्टी के लोग नहीं चाहते कि राहुल गांधी अध्यक्ष बनें. बयान सब दे रहे हैं, पर कोई भी राहुल गांधी को अध्यक्ष बनाने के फैसले का समर्थन नहीं कर रहा है. कांग्रेस ऐसे जाल में फंस गई है, जिसमें विचार की धार नहीं है, आगे बढ़ने की तेज इच्छा नहीं है और संगठन बनाने के लिए जिस कुशलता की आवश्यकता होती है, वो कुशलता नहीं है. मेरे पास कांग्रेस कार्यकर्ता बहुत ज्यादा आते हैं. कांग्रेस के नेता भी मिलते हैं, बात करते हैं. सबमें आशा का अभाव है, इसीलिए जिसको जहां जगह मिल रही है, वो वहां तलाशने की कोशिश कर रहा है. कांग्रेस संगठन के अलावा किसी अन्य संगठन में अगर किसी भी कांग्रेस कार्यकर्ता को संभावना दिखाई देती है, तो मन से उधर चला जाता है. ये स्थिति 100 साल पुरानी कांग्रेस की है.

लोगों के मन में एक छोटी सी आशा है. शायद प्रियंका गांधी लोकसभा चुनाव में कांग्रेस की कमान संभालें, तो कांग्रेस दोबारा लड़ने के स्तर पर आ जाए. वो ये भी कहते हैं कि प्रियंका गांधी के आते ही भारतीय जनता पार्टी सरकार रॉबर्ट वाड्रा के ऊपर, जो उनके पति हैं, शिकंजा कस लेगी और तब प्रियंका गांधी फिर आगे बढ़ने से हिचक जाएंगी. सवाल प्रियंका गांधी और राहुल गांधी का नहीं है. सवाल उस तरीके का है, जिसमें ये दोनों कार्यकर्ता की बात कुछ कम, कुछ ज्यादा सुनते तो हैं, लेकिन उस पर अमल करने में हिचक जाते हैं. सोनिया गांधी लोगों से बातें करती हैं, पर कोई प्रतिक्रिया नहीं देतीं. राहुल गांधी की प्रतिक्रिया किसी को समझ में नहीं आती. राहुल गांधी लोगों के नाम याद नहीं कर पाते. राहुल गांधी के सामने अमेठी में भी ये खतरा पैदा हो गया है. स्मृति ईरानी जी-जान से अमेठी को किस तरह राहुल मुक्त किया जा सके, इसकी योजना बनाने में लगी हुई हैं. अब वो एक कदम और आगे बढ़कर नरेन्द्र मोदी की एक जिम्मेदारी संभालने लगी हैं. वो जिम्मेदारी है, सोनिया गांधी पर हमला करने की. ऐसी स्थिति में कांग्रेस का क्या हाल होगा? यहीं मुझे लगता है कि जयराम रमेश की चिंता काफी जायज है. कांग्रेस के लोग, जिन्हें हम सचमुच कांग्रेस कहते हैं, वो इतना तो निश्चित है कि भारतीय जनता पार्टी की तरफ नहीं जाएंगे, लेकिन वो कांग्रेस के लिए भी जी-जान से काम नहीं करेंगे. क्या इस स्थिति को तोड़ा जा सकता है? कांग्रेस का समर्थन कोई नहीं करता, क्योंकि मौजूदा बाजार आधारित आर्थिक नीतियां और गरीबों के खिलाफ सारे कदम कांग्रेस ने ही उठाए. नरसिम्हा राव ने जो किया, उसके लिए उन्हें क्षमा नहीं किया जा सकता. वो इस तरह से अपना रास्ता बदल गए कि आने वाली कोई भी सरकार उसे सही करने की हिम्मत नहीं जुटा पाई. अब देश इतना ज्यादा बाजार के चंगुल में फंस चुका है कि चाहे भी तो नहीं उबर सकता. उसे जीना और मरना बाजार आधारित अर्थव्यवस्था के साथ है, जहां लूट है, शोषण है, गरीबों का दमन है.

पर कांग्रेस संगठन लोकतंत्र के लिए आवश्यक है. कोई भी राजनीतिक दल ऐसा नहीं है, जिसकी पैठ सारे देश में हो. छोटा ही सही, लेकिन विरोध का स्वर होना आवश्यक है, जिसके लिए देश में कांग्रेस का जिंदा रहना बहुत जरूरी है. भारतीय जनता पार्टी के लोकतांत्रिक स्वरूप में विपक्ष का कोई स्थान नहीं है. लोकतंत्र बिना विपक्ष के अनाथ व्यक्ति की तरह से है, जिसके सामने कोई अवसर नहीं, कोई रास्ता नहीं, सिर्फ आत्महत्या एकमात्र चारा है. कांग्रेस कैसे जिंदा रहे, इसके बारे में कांग्रेस के लोग अगर नहीं सोचेंगे, तो कांग्रेस के लोग लोकतंत्र को समाप्त करने के लिए सबसे बड़े दोषियों की सूची में सबसे ऊपर होंगे. ■

editor@chauthiduniya.com

बेरोज़गारी ख़त्म करने के दावों के बीच बढ़ती बेरोज़गारी!

तपिश

तमाम देसी-विदेशी और सरकारी एजेंसियों के आर्थिक सर्वेक्षणों की रिपोर्ट्स बताती हैं कि भारत में बेरोज़गारी की समस्या विकराल रूप धारण करने वाली है. हालांकि प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी सहित पूरी भाजपा-आरएसएस ब्रिगेड अच्छे दिनों, विकास-विकास और डिजिटल इंडिया का भजन गाकर जनता को भरमाने-फुसलाने की कोशिशों में तन-मन-धन से लगी हुई है. सन 2014 के लोकसभा चुनाव में भाजपा की ओर से नरेंद्र मोदी ने विकास और अच्छे दिनों का सपना दिखाया था और बेरोज़गारों के लिए 1 करोड़ से भी अधिक नौकरियां पैदा करने का वायदा किया था. हमें भूलना नहीं चाहिए कि कांग्रेस के ज़माने में कांग्रेसी नेता भी इसी तरह हवाई वायदों के हवाई गोले दागा करते थे. मज़ेदार बात यह है कि उस समय भी आम जन इन हवाई दावों की हक़ीकत को नहीं समझते थे और आज भी नहीं समझते हैं. सच्चाई को क़रीब से जानने के लिए आइए सबसे पहले हम कुछ आर्थिक सर्वेक्षणों की रिपोर्ट्स के आंकड़ों पर एक सरसरी नज़र डालें.

देश के उद्योगपतियों की शीर्ष संस्था एसोचैम की रिपोर्ट बताती है कि 1991 में भारत में कुल श्रमिकों की संख्या 33.7 करोड़ थी, जो 2013 तक बढ़कर क़रीब 48 करोड़ हुई और 2020 तक उसके 65 करोड़ हो जाने की सम्भावना है. भारत के श्रम मंत्रालय के अनुसार, हर माह क़रीब 10 लाख नए लोग काम करने के लिए श्रम बाज़ार में उतरते हैं. ये सिर्फ आंकड़े नहीं हैं, बल्कि एक ठोस सच्चाई है, जो बताती है कि हमारे देश में रोज़गार की मांग ठोस रूप में कितनी है.

अब देखते हैं कि इस मांग के समक्ष कुल रोज़गार की आपूर्ति कितनी है. भारत सरकार द्वारा जारी आर्थिक सर्वेक्षण–2016 को मानें, तो 1989–2010 के बीच 1 करोड़ 50 हज़ार रोज़गार पैदा हुआ. इनमें से भी औपचारिक सेक्टर में मात्र 30 लाख 70 हज़ार नौकरियां पैदा हुईं. हम जानते हैं कि 1991–2013 के दौर में भारत में जीडीपी की विकास दर लगातार उठान पर रही है. इसका मतलब है कि देश में लगातार पूंजी का विकास होता चला गया है, जबकि रोज़गार का विकास ढलान पर है. यह रिपोर्ट बताती है कि 1999 से 2004–05 के बीच जहां जीडीपी में हर 100 रुपए की वृद्धि के बरक्स 50 नए रोज़गार पैदा हुए, वहीं 2004–05 से 2009–10 के बीच यह गिरकर मात्र 4 रोज़गार तक सिमट गया था.

सवाल यह है कि रोज़गार मुहैया कराने के नेताओं और पार्टियों के हवाई वायदों के विपरीत वास्तविक दुनिया में इतना कम रोज़गार क्यों पैदा हो रहा है. इसे जानने के लिए अर्थव्यवस्था के एक मुख्य क्षेत्र विनिर्माण पर एक नज़र दौड़ाते हैं. फ़िक्की की एक हालिया रिपोर्ट में बताया गया है कि वर्ष 2016–17 के दौरान विनिर्माण उद्योग अपनी क्षमता का मात्र 72 प्रतिशत ही काम करेगा. इसका मतलब है कि कारख़ानों में क़रीब 30 प्रतिशत मशीनें बन्द रहने वाली हैं. यही वजह है कि नए कारख़ाने लगने, वर्तमान कारख़ानों के विस्तार या फिर नए मज़दूरों की भर्ती की दूर-दूर तक कोई सम्भावना नहीं है. बहरहाल, अगर इतना ही होता, तब भी गनीमत थी. अधिकांश प्रतिष्ठानों ने अपना मुनाफ़ा बढ़ाने के लिए मज़दूरियों पर होने वाले ख़र्चों में बड़ी कटौती करने की योजनाएं बनाई हैं. उत्पादन की आधुनिक तकनीकों का विकास उनके मंसूबों को पूरा करने में मदद पहुंचा रहा है. पूंजीवाद के आरम्भ से ही पूंजीपति वर्ग ने विज्ञान और तकनीकी पर अपनी पकड़ क़ायम कर ली थी. तब से लेकर आज तक उत्पादन की तकनीकों में होने वाले हर विकास ने पूंजीपतियों को पहले से अधिक ताक़तवर बनाया है और मज़दूरों का शोषण करने की उनकी ताक़त को कई गुना बढ़ा दिया है. पिछले कुछ वर्षों में आईबीएम द्वारा विकसित 'वॉटसन' प्रणाली और विप्रो द्वारा एक ऐसी ही अन्य प्रणाली 'होम्स' का विकास इसका प्रमाण है. इतना ही नहीं पिछले कुछ वर्षों में रोबोटिक्स के विकास ने कारख़ानों के भीतर श्रम संगठन को व्यापक ढंग से बदल दिया है. ज़ाहिर है कि इन तकनीकों का असर आईटी सेक्टर, सॉफ्टवेयर सेवा, टेलीकॉम, बैंकिंग एवं फ़ाइनेंस पर भी पड़ने वाला है. आपको बता दें कि पिछले साल इस क्षेत्र से 16,000 लोगों को निकाला जा चुका है और अगले डेढ़ वर्षों में इस क्षेत्र में 15 लाख नौकरियां ख़त्म होने वाली हैं. इसकी मार ज़्यादातर सफ़ेदपोश मज़दूरों पर पड़ेगी, जो आमतौर पर ख़ुद को मज़दूर मानते ही नहीं हैं. इसी तरह टेलीकॉम सेक्टर में कार्यरत 22 लाख लोगों में से 33 प्रतिशत को निकाले जाने की तैयारी हो चुकी है और यही हाल बैंकिंग सेक्टर का भी है.

देश के उद्योगपतियों की शीर्ष संस्था एसोचैम की रिपोर्ट बताती है कि 1991 में भारत में कुल श्रमिकों की संख्या 33.7 करोड़ थी, जो 2013 तक बढ़कर क़रीब 48 करोड़ हुई और 2020 तक उसके 65 करोड़ हो जाने की सम्भावना है. भारत के श्रम मंत्रालय के अनुसार, हर माह क़रीब 10 लाख नए लोग काम करने के लिए श्रम बाज़ार में उतरते हैं. ये सिर्फ़ आंकड़े नहीं हैं, बल्कि एक ठोस सच्चाई है,...

हमने पहले भी बताया कि ऑटोमेशन की यह प्रक्रिया विनिर्माण उद्योग तक जाती है, जो कारख़ानों के भीतर श्रम के संगठन को तेज़ी से बदल रही है. आधुनिक उद्योग ने बड़े पैमाने पर रोबोट्स का इस्तेमाल करना शुरू कर दिया है. टेक्सटाइल इंडस्ट्री में एक रोबोटिक मशीन पर काम करने वाले मज़दूर से उतना उत्पादन करवाया जा सकता है, जितना पहले 100 मज़दूर मिलकर किया करते थे. यही कारण है कि टेक्सटाइल उद्योग की एक बड़ी कम्पनी रेमंड्स ने भारत में चलने वाले 16 कारख़ानों में कार्यरत 30 हज़ार मज़दूरों में से 10 हज़ार को निकालने की तैयारी कर ली है. एचएफ़एस नाम की एक अमेरिकी शोध संस्था के अनुसार 2021 तक भारत के छोटे-मंझोले उद्योगों में ऑटोमेशन के कारण 6 लाख 40 हज़ार कामगार बेरोज़गार होंगे. मशहूर उद्योगपति मोहनदास पाई ने बताया है कि अगले 9 वर्षों में ऑटोमेशन की वजह से 20 करोड़ भारतीय युवा बेरोज़गार होने वाले हैं. विश्व बैंक ने भी एक आकलन किया है कि अगले 15 से 20 सालों में ऑटोमेशन की लहर भारत में 69 प्रतिशत कामगारों को बेरोज़गार करेगी.

एक बात साफ़ है कि सियासी मदारियों के और संत्रियों-मंत्रियों के दावों के विपरीत भारत में बेरोज़गारी भयानक रूप धारण करने वाली है. ज़ाहिर है, ये बेरोज़गार चुप नहीं बैठेंगे और देश-दुनिया का पूंजीपति वर्ग भविष्य के वर्ग-संघर्षों के तूफ़ानों की इन सम्भावनाओं से बेहद चिन्तित है. कहीं ऐसा तो नहीं कि सरकार, भाजपा और आरएसएस के नेता जिस जाति और धार्मिक नफ़रत को फैलाने का काम कर रहे हैं, वह सीधे तौर पर वर्ग संघर्षों से जनता का ध्यान भटकाने का राजनीतिक उपकरण बन चुका है और इस तरह प्रकारान्तर से पूंजीपति वर्ग की ज़रूरी सेवा कर रहा है? ■

feedback@chauthiduniya.com

आईएसआई और आतंकियों की रीढ़ तोड़ने में लगा यूपी एंटी टेररिस्ट स्क्वायड

एडीएम दफ्तर से होती थी सेना की जासूसी

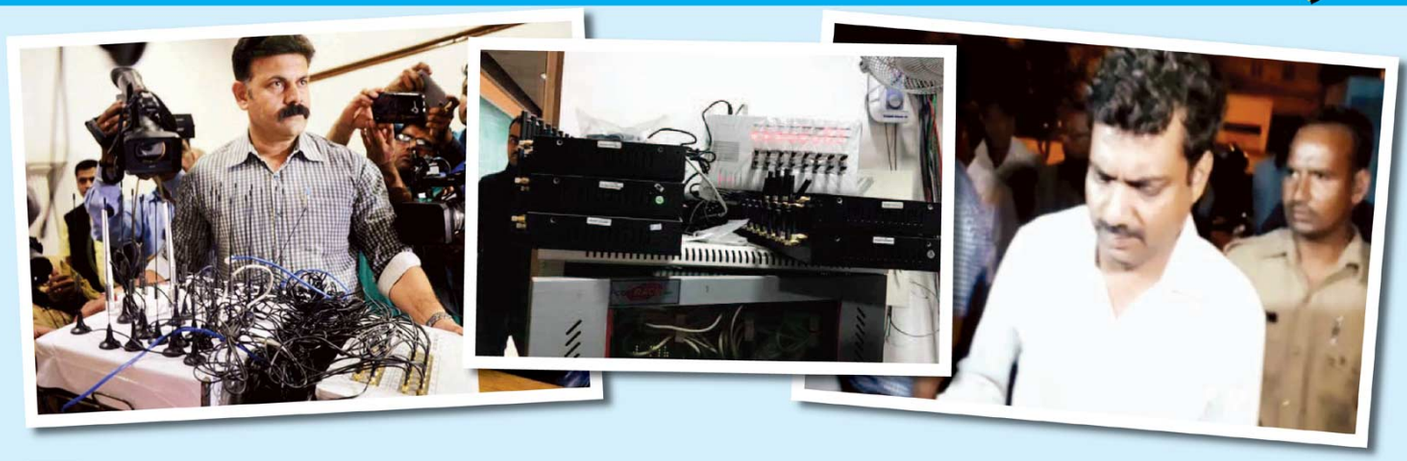

एटीएस ने फैजाबाद से जिस आईएसआई एजेंट आफताब को गिरफ्तार किया था, उसने खुलासा किया कि वह दिल्ली में बैठे आईएसआई हैंडलर मेहरबान अली के सम्पर्क था. उसी के कहने पर वह सेना की जासूसी करता था. उसने सेना के मूवमेंट से जुड़ी अनेक जानकारियां पाकिस्तानी एजेंसी को दी थीं. मेरहबान अली पाकिस्तान दूतावास का कर्मचारी था. मेहरबान अली की मदद से आफताब दो बार पाकिस्तान भी गया था. वहां उसे जासूसी की ट्रेनिंग दी गई थी. वह लखनऊ, फैजाबाद और अमृतसर में सेना के मूवमेंट्स की जानकारी कोड-वर्ड के जरिए पाकिस्तान में बैठे आईएसआई हैंडलर को देता था. वह दिल्ली स्थित पाकिस्तान उच्चायोग के भी सम्पर्क में रहता था. एटीएस ने आफताब को पकड़ने के बाद मुंबई से अल्ताफ कुरैशी और जावेद को भी गिरफ्तार किया.

भिखारी सिंह इमरी

उत्तर प्रदेश में पाकिस्तानी खुफिया एजेंसी आईएसआई का नेटवर्क काफी तेजी से फैल रहा है. यही नेटवर्क आईएसआईएस जैसे आतंकी संगठनों को भी मदद पहुंचा रहा है. पाकिस्तान को भारतीय सेना की गोपनीय सूचनाएं बेचने के आरोप में पकड़े गए झांसी एडीएम के स्टेनो राघवेंद्र अहिरवार से ऐसे कई महत्वपूर्ण सुराग मिले हैं. स्टेनो यूपी एटीएस की हिरासत में है. राघवेंद्र ने अपना जुर्म कबूल कर लिया है. एंटी टेररिस्ट स्क्वायड (एटीएस) के मुताबिक स्टेनो राघवेंद्र अहिरवार जुलाई 2009 से जुलाई 2017 तक झांसी एडीएम सदर कार्यालय में कार्यरत था और वर्तमान में एडीएम न्यायिक के यहां काम कर रहा था. वह भारतीय सेना से जुड़े पत्राचार देखता था और उसकी सूचनाएं आईएसआई को मुहैया कराता था. एटीएस के डीएसपी मनीष सोनकर के समक्ष राघवेंद्र ने स्वीकार किया कि बबीना फील्ड फायरिंग रेंज (बीएफएफआर) में फायरिंग प्रैक्टिस के लिए भारतीय सेना की विभिन्न यूनिटें आती रहती हैं, उससे सम्बन्धित सूचना उन सभी यूनिट्स द्वारा जिलाधिकारी झांसी को गोपनीय पत्र द्वारा दी जाती है. सूचना की कॉपी एडीएम सदर कार्यालय भी भेजी जाती है, जहां से वे राघवेंद्र के जरिए लीक हो जाती थीं.

खुद को मेजर यादव बताने वाला कोई शख्स वर्ष 2009 से ही फोन पर उससे सूचनाएं प्राप्त करता था. उक्त तथाकथित मेजर यादव बदल-बदल कर नौ अंकों वाले मोबाइल नम्बर से कॉल किया करता था. इन मोबाइल नम्बरों को जासूसी के लिए काम करने वाले अवैध टेलीफोन एक्सचेंज नेटवर्क का हिस्सा बताया गया है. एटीएस ने बताया कि सेना ने इसकी पुष्टि की है कि मेजर यादव नाम का कोई व्यक्ति वहां नियुक्त नहीं रहा है. एटीएस इस बात की भी जांच कर रहा है कि इस मामले में एडीएम की क्या भूमिका थी. एटीएस ने आईबी की सूचना पर स्टेनो को हिरासत में लिया है. आरोपी के पास से लैपटॉप, मोबाइल, पेनड्राइव और कई सिम कार्ड बरामद किए हैं. एटीएस उसे हिरासत में लेकर पूछताछ के लिए लखनऊ लाया है. एटीएस ने कहा कि काफी दिनों से खबर मिल रही थी कि झांसी के एडीएम ऑफिस से पाकिस्तान की खुफिया एजेंसी आईएसआई को सेना से जुड़ी गोपनीय सूचनाएं भेजी जा रही हैं. स्टेनो राघवेंद्र उसी डेस्क पर तैनात था, जहां से सूचनाएं लीक हो रही थीं. झांसी में सेना की बड़ी छावनी है, जिसे सुरक्षा के लिहाज से संवेदनशील माना जाता है.

इसके पहले भी एटीएस ने अवैध टेलीफोन एक्सचेंज के जरिए जासूसी करने वाले एक गैंग का भंडाफोड़ किया था. इस नेटवर्क को पाकिस्तान से कंट्रोल किया जा रहा था. पुलिस ने इस नेटवर्क से जुड़े 11 आईएसआई एजेंटों को गिरफ्तार किया था. टेलीफोन एक्सचेंज नेटवर्क के सरगना गुलशन को दिल्ली के महरौली इलाके से गिरफ्तार किया गया था. अवैध टेलीफोन एक्सचेंज में फोन कॉल्स को रूटर के जरिए रूट करके अलग-अलग सरकारी विभागों में कॉल किया जाता था और उसके माध्यम से सरकारी विभागों से खुफिया जानकारियां जुटाई जाती थीं. इसके बारे में मिलिट्री इंटेलिजेंस को जब अंदेशा हुआ, तो मामले की शिकायत की गई. एटीएस को आशंका है कि इससे जुड़े लोग सरकारी अधिकारियों के नेटवर्क में घुसे हुए हैं. एटीएस ने लखनऊ, हरदोई, फैजाबाद और सीतापुर में छापा मारकर ऐसे पांच अवैध टेलीफोन एक्सचेंज पकड़े थे. अवैध टेलीफोन एक्सचेंज के माध्यम से आईएसआई एजेंटों का गिरोह एक तरफ जासूसी कर रहा था, तो दूसरी तरफ सरकार को करोड़ों का चूना भी लगा रहा था. एटीएस के अधिकारियों ने बताया कि जम्मू-कश्मीर मिलिट्री इंटेलिजेंस को इस बारे में सबसे पहले भनक लगी, जब यूपी के नम्बरों से आर्मी यूनिट्स पर कॉल आ रहे थे. सूचना मिलने पर एटीएस ने इन नम्बरों की जांच की, तो पाया कि अवैध टेलीफोन एक्सचेंज के माध्यम से भारत के बाहर से कॉल किए जा रहे हैं, लेकिन डिस्प्ले पर भारत का ही नम्बर दिखता था.

तभी एटीएस ने लोगों को आगाह किया था कि कोई व्यक्ति अगर किसी भारतीय आईएसडी कोड (+91) के जरिए कॉल करे और यह कहे कि वह विदेश में है, तो ऐसे कॉल के प्रति सतर्क हो जाना चाहिए. इसकी सूचना पुलिस और टेलीकॉम रेगुलेट्री अथॉरिटी को तुरंत देनी चाहिए. यही कॉल्स अवैध टेलीफोन एक्सचेंज के जरिए आने वाली फर्जी आईएसडी कॉल्स होती हैं, जो देश की सुरक्षा के लिए बड़ा खतरा हैं. इस मामले में एटीएस ने लखनऊ से सीतापुर के रहने वाले राहुल रस्तोगी और शिवेंद्र मिश्रा, लखनऊ के अमीनाबाद के रहने वाले हर्षित गुप्ता, राजाजीपुरम के विशाल कक्कड़ और बुलंदशहर के राहुल सिंह को गिरफ्तार किया था. अभियुक्तों के पास से तीन लैपटॉप, 12 सिम बॉक्स, लगभग 87 सिम कार्ड्स, 25 मोबाइल फोन डाटा-कार्ड और अन्य संचार सामग्रियां बरामद की गई थीं. हरदोई से अभियुक्त विनीत कुमार दीक्षित को गिरफ्तार करके उसके पास से 16 एवं 32 स्लॉट के दो सिम-बॉक्स, 13 सिमकार्ड वोडाफोन, दो लैपटॉप, दो पेनड्राइव और चार मोबाइल फोन बरामद किए गए थे. सीतापुर से ऋषि होरा, श्याम बाबू, उत्तम शुक्ला और विकास वर्मा को गिरफ्तार किया गया था.

उल्लेखनीय है कि अवैध टेलीफोन एक्सचेंज के जरिए जासूसी किए जाने का सुराग मध्य प्रदेश में भी मिला था. इसमें भाजपा के भी दो कार्यकर्ता लिप्त पाए गए थे, तब बड़ा हो-हल्ला भी मचा था. तब यह भी खुलासा हुआ था कि देशभर में पांच सौ से ज्यादा अवैध टेलीफोन एक्सचेंज काम कर रहे हैं. जासूसी रैकेट के सदस्य अवैध टेलीफोन एक्सचेंज के माध्यम से ही सेना से जुड़ी अहम जानकारी सरहद पार बैठे अपने आकाओं को भेजते थे. सीमा पार से ही इन लोगों को हवाला के जरिए पैसा भेजा जाता है. एटीएस ने ऐसे करीब 50 खाते जब्त किए हैं. गिरोह से जुड़े तीन लोगों को हर माह आईएसआई की तरफ से आठ लाख रुपए दिए जाते थे. पिछले वर्ष जम्मू के आरएसपुरा में आईएसआई के दो एजेंट गिरफ्तार किए गए थे. उन्हीं से यह सुराग मिला था कि वे सतना के रहने वाले बलराम नामक एक शख्स को पैसे देते थे और सूचनाएं हासिल करते थे. इसके बाद सतना से बलराम को गिरफ्तार किया गया था. बलराम की निशानदेही पर ही बाकी 11 लोगों को गिरफ्तार किया गया.

एटीएस ने फैजाबाद से जिस आईएसआई एजेंट आफताब को गिरफ्तार किया था, उसने खुलासा किया कि वह दिल्ली में बैठे आईएसआई हैंडलर मेहरबान अली के सम्पर्क था. उसी के कहने पर वह सेना की जासूसी करता था. उसने सेना के मूवमेंट से जुड़ी अनेक जानकारियां पाकिस्तानी एजेंसी को दी थीं. मेरहबान अली पाकिस्तान दूतावास का कर्मचारी था. मेहरबान अली की मदद से आफताब दो बार पाकिस्तान भी गया था. वहां उसे जासूसी की ट्रेनिंग दी गई थी. वह लखनऊ, फैजाबाद और अमृतसर में सेना के मूवमेंट्स की जानकारी कोड-वर्ड के जरिए पाकिस्तान में बैठे आईएसआई हैंडलर को देता था. वह दिल्ली स्थित पाकिस्तान उच्चायोग के भी सम्पर्क में रहता था. एटीएस ने आफताब को पकड़ने के बाद मुंबई से अल्ताफ कुरैशी और जावेद को भी गिरफ्तार किया. एटीएस का दावा है कि ये तीनों आरोपी पाकिस्तानी दूतावास और आईएसआई को भारत से खुफिया सूचनाएं एकत्र करके उपलब्ध करवाते रहे हैं. पाकिस्तानी दूतावास के कर्मचारी मेहरबान अली के निर्देशों पर ही अल्ताफ कुरैशी को जावेद पैसे उपलब्ध कराता था. अल्ताफ ने इन सूचनाओं के लिए आफताब अली के खाते में पैसे जमा कराए थे.

पकड़े गए आईएसआई एजेंट आफताब की नानी पाकिस्तान में रहती हैं. आफताब ने पाकिस्तान जाने के लिए दिल्ली में पाकिस्तानी दूतावास में वीजा का आवेदन किया था. वीजा नहीं मिलने पर वह मेहरबान अली के सम्पर्क में आया. मेहरबान अली ने उससे कहा था कि वह आईएसआई के लिए काम करेगा, तो उसे वीजा दिलवा दिया जाएगा. इसके बाद आफताब ने फैजाबाद में सेना के मूवमेंट्स के कुछ फोटो मेबरहाब अली को दिए थे. इस पर उसका वीजा जारी हो गया था. कराची के ग्रीन टाउन इलाके में अपनी नानी के घर पर वह कई महीने रहा. इसके बाद में उसे लाहौर में प्रशिक्षण दिया गया. भारत आने पर उसने मेहरबान अली से मिलना जुलना जारी रखा. इस दौरान आफताब लगातार फैजाबाद सैन्य बेस के वीडियो और फोटो व्हाट्सऐप के जरिए पाकिस्तान भेजता रहा. उसके पाकिस्तानी उच्चायोग से सम्पर्क में रहने के कई प्रमाण एटीएस को मिले हैं. फैजाबाद ही नहीं, वह अमृतसर से भी सेना के मूवमेंट्स की जानकारियां पाकिस्तान भेजता रहा. इसी कड़ी में यूपी की एटीएस ने दिल्ली के पंजाबी बाग इलाके में एफआईआईटी-जेईई के नाम पर अवैध इंटरनेशनल टेलीफोन एक्सचेंज चलाने वाले मास्टरमाइंड गुलशन को गिरफ्तार किया था. पाकिस्तानी खुफिया एजेंसी आईएसआई के निर्देशन में गुलशन वहां से इंटरनेशनल टेलीफोन एक्सचेंज चला रहा था. इस तरह के अवैध टेलीफोन एक्सचेंज लखनऊ, सीतापुर, फैजाबाद और हरदोई में चल रहे थे. ■

feedback@chauthiduniya.com

यूपी को घेर रहा आईएसआई और आतंकी नेटवर्क

उत्तर प्रदेश के तीन दर्जन से अधिक जिलों में आईएसआई का नेटवर्क फैला हुआ है. बसपा के शासनकाल में विधानसभा में एक प्रश्न के दौरान तत्कालीन सरकार की ओर से यह रिपोर्ट सदन में रखी गई थी. रिपोर्ट बताती है कि खास तौर पर पश्चिमी उत्तर प्रदेश में आईएसआई का नेटवर्क तेजी से मजबूत हो रहा है. पाकिस्तानी खुफिया एजेंसी के एजेंट वॉट्सएप ग्रुप से लड़कों को जोड़कर उन्हें सूचनाएं संकलित करने के लिए इस्तेमाल कर रहे हैं. सुरक्षा एजेंसी को ऐसे चार संदिग्ध पाकिस्तानियों के नम्बर मिले, जो लगातार बरेली के छात्रों के संपर्क में थे. छात्रों के पास कुछ संदिग्धों की कॉल सऊदी अरब से भी आ रही थी. पश्चिमी उत्तर प्रदेश के बरेली, मुरादाबाद, पीलीभीत, मेरठ, मुजफ्फरनगर, बिजनौर, अलीगढ़, आगरा, सहारनपुर, अमरोहा, गाजियाबाद और संभल जैसे जिलों में आईएसआई की गतिविधियां तेजी से बढ़ी हैं. बरेली के दीवानखाना इलाके में मामूली फोटोग्राफर बनकर पाकिस्तान के लिए जासूसी का काम करने वाले एजाज की गिरफ्तारी से खुफिया एजेंसियां चौकस हुईं. यह बात और पुख्ता हो गई कि पश्चिमी यूपी में पाकिस्तानी खुफिया एजेंसी के मुर्गे बड़ी तादाद में छिपे हुए हैं. बरेली में वायुसेना एयरबेस के नजदीक रिठौरा के पास पकड़े गए दो कश्मीरी युवकों से भी पुलिस को इस बारे में कई अहम सुराग मिले थे. आतंकियों के द्वारा पश्चिमी यूपी के जिलों में अड्डा बना कर दूसरे राज्यों में ऑपरेट करने का खुलासा कई बार हो चुका है. भोपाल में मारा गया सिमी आतंकी अमजद अपने साथी एजाज के साथ ही मध्य प्रदेश की खंडवा जेल से फरार हुआ था. इसके बाद उसने बिजनौर में अड्डा बनाया था. पश्चिमी उत्तर प्रदेश में आईएसआई की गतिविधियों का अंदाजा इस बात से ही लगाया जा सकता है कि पिछले एक दशक में ही तकरीबन ढाई सौ आतंकी पकड़े जा चुके हैं. यूपी के अन्य जिलों को मिला कर पांच सौ से अधिक आतंकी और जासूस पकड़े जा चुके हैं. इनमें जैश-ए-मोहम्मद, लश्कर-ए-तय्यबा, आईएसआईएस और इंडियन मुजाहिद्दीन से जुड़े आतंकी शामिल हैं. खुफिया एजेंसियों का कहना है कि आजमगढ़, मऊ, वाराणसी, देवरिया, महराजगंज, बलिया, श्रावस्ती जैसे पूर्वी उत्तर प्रदेश के जिले भी आईएसआई और आतंकी गतिविधियों से आक्रांत हैं. आजमगढ़ का सरायमीर, संजरपुर, बीनापारा और कुछ अन्य इलाके आतंकी गतिविधियों के लिए कुख्यात हैं. ■

आईएसआईएस आतंकी की प्रेम दीवानी डॉक्टर

पूर्वी उत्तर प्रदेश के आजमगढ़ जिले का सरायमीर कस्बा माफिया डॉन अबू सलेम के कारण पहले ही सुर्खियों में रहा है. फिल्म अभिनेत्री मोनिका बेदी और अबू सलेम के प्रेम की पींगे भी उतनी ही विख्यात रही हैं. उसी तर्ज पर आजमगढ़ की मेडिकल की एक छात्रा कुख्यात आतंकी संगठन आईएसआईएस के आतंकी अयान खान सलाफी के प्रेम में पागल हो गई. फेसबुक से बढ़ी दोस्ती अहले हदीस पर चर्चा से होती हुई प्रेम और निकाह तक पहुंच गई. हैरत यह है कि लड़की के परिवार वाले भी इस निकाह के लिए रजामंद हो गए. सलाफी के प्रेम में दीवानी लड़की ने यह जानते हुए भी कि सलाफी पहले से शादीशुदा है और दो बच्चों का बाप है, उससे शादी कर ली. सलाफी ने उसे पहले तो सऊदी अरब आने को कहा और वहां से सीरिया चल कर साथ बसने की सलाह दी. सऊदी जाने के लिए शफी अरमार उसका मददगार बनता, जो भारत में आईएसआईएस नेटवर्क का सरगना है. खैर, सलाफी गिरफ्तार हो गया और उसे भारतीय खुफिया एजेंसी एनआईए के हवाले कर दिया गया. अब वह हवालात में है और उसकी प्रेमिका आजमगढ़ में पुलिस की निगरानी में. हालांकि पुलिस ने उसे गिरफ्तार नहीं किया है. ■

सपा में मची है भगदड़, विधान परिषद सदस्य ताबड़तोड़ दे रहे इस्तीफ़ा

इस भगदड़ के कुछ और मायने हैं

मुलायम ने लोहिया ट्रस्ट से अखिलेश समर्थकों को निकाला

दीनबंधु कबीर

चुनाव के पहले किसी पार्टी में भगदड़ मचे तो उसके अवसरवादी मायने निकाले जाते हैं, लेकिन चुनाव बाद की भगदड़ के खास राजनीतिक निहितार्थ हैं. चुनाव में समाजवादी पार्टी के हाथ जैसा भी परिणाम आया, परिणाम आने के चार महीने बाद वरिष्ठ नेताओं में जो भगदड़ मची उसने सपा के हाथ से तोते उड़ा दिए हैं. जिस तरह डॉ. अशोक वाजपेयी और सरोजिनी अग्रवाल जैसे वरिष्ठ सपा नेताओं ने विधान परिषद की सदस्यता से त्यागपत्र देकर खुद को पार्टी से अलग कर लिया, उसने यह बताया कि समाजवादी पार्टी का बुरा हाल है. सपा के विधान परिषद सदस्य यशवंत सिंह का भी एमएलसी पद को ठोकर मार कर सपा छोड़ जाना यह संकेत दे रहा है कि कुछ खास होने वाला है. यशवंत सिंह का विधान परिषद का कार्यकाल 6 जुलाई 2022 तक था. चर्चा यह भी रही कि मधुकर जेटली ने भी इस्तीफा दिया, लेकिन शिवपाल ने आखिरी समय में इसे संभाल लिया. शिवपाल ने कहा, 'मैंने ही मधुकर जेटली को इस्तीफा देने से रोका हुआ है.' जेटली का जाना तय ही माना जा रहा है. सपा के एमएलसी मजहर हुसैन उर्फ बुक्कल नवाब के इस्तीफे पर यह कहा जा सकता है कि कई मुकदमों में फंसे होने के कारण बुक्कल भाजपा की शरण में आ गए, लेकिन सपा के अन्य नेताओं के इस्तीफे समाजवादी पार्टी के बुरे दिन की सनद हैं. सपाई कहते हैं कि यह सिलसिला तो अभी शुरू हुआ है. अंबिका चौधरी ने भी विधान परिषद की सदस्यता से इस्तीफा दे दिया है. अखिलेश द्वारा बेजार होने के बाद अंबिका बसपा में चले गए थे. अंबिका ने कहा कि उन्हें एमएलसी की सीट सपा में रहते हुए मिली थी इसीलिए वे इसे त्याग रहे हैं. इन सबके पीछे कोई खास वजह है. इस तरह की बिसात बिछने के पीछे कोई खास राजनीतिक मकसद और योजना तो है ही. तभी तो हताश अखिलेश यादव ने यह कहना शुरू कर दिया है, 'हमारे एमएलसी भाग रहे हैं. पता नहीं, भाजपा उन्हें कौन सा प्रसाद दे रही है. वे हमें भी बताएं, आगे हमें भी इस प्रसाद की जरूरत पड़ेगी.'

समाजवादी पार्टी के विधान परिषद सदस्यों के इस्तीफे धड़ाधड़ हुए. यशवंत सिंह, बुक्कल नवाब, सरोजिनी अग्रवाल फिर डॉ. अशोक वाजपेयी का सिलसिलेवार इस्तीफा सपा के स्वयंभू अध्यक्ष अखिलेश यादव के लिए सीरियल ब्लास्ट की तरह था. इन्हीं सीरियल धमाकों में मुलायम सिंह का पलट वार भी शामिल हो गया, जब उन्होंने लोहिया ट्रस्ट से अखिलेश के सारे समर्थकों को निकाल बाहर किया. मुलायम सिंह यादव की अध्यक्षता में पिछले दिनों हुई लोहिया ट्रस्ट की बैठक में मुलायम ने अखिलेश यादव के करीबी चार लोगों रामगोविंद चौधरी, अहमद हसन, उषा वर्मा और अशोक शाक्य को लोहिया ट्रस्ट से हटाने का फैसला सुनाया. बैठक में शिवपाल सिंह यादव, भगवती सिंह के साथ समाजवादी पार्टी के कई वरिष्ठ नेता मौजूद थे. रामगोविंद चौधरी विधानसभा में नेता विरोधी दल हैं और अहमद हसन विधान परिषद सदस्य. ट्रस्ट की बैठक में अखिलेश यादव और रामगोपाल यादव नहीं आए, जबकि उन्हें बुलाया गया था. मुलायम सिंह यादव लोहिया ट्रस्ट के अध्यक्ष हैं. अखिलेश यादव, शिवपाल यादव और रामगोपाल यादव ट्रस्ट में सदस्य हैं.

सपाई विधान परिषद सदस्यों के ताबड़तोड़ हुए इस्तीफे पर लोग यह आकलन लगा रहे थे कि मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ, दोनों उप मुख्यमंत्रियों केशव प्रसाद मौर्य, डॉ. दिनेश शर्मा, दो मंत्रियों स्वतंत्रदेव सिंह और मोहसिन रजा के लिए सदन में स्थान बनाने के लिए इस्तीफे 'मैनेज' किए गए. जानकारों का कहना है कि केशव मौर्य दिल्ली वापस जा सकते हैं और वक्फ विवाद के कारण मोहसिन रजा योगी मंत्रिमंडल से ड्रॉप हो सकते हैं. अगर ऐसा हुआ तो भाजपा को महज तीन सीटों की जरूरत पड़ेगी. बहरहाल, अगर भाजपा को विधान परिषद में पांच सीटों की जरूरत मान भी ली जाए, तो उससे दो अधिक सीटें यानि कुल सात सीटें खाली हो गई हैं. स्थानीय निकाय कोटे की एक सीट पहले से खाली थी. जरूरत से अधिक इस्तीफों पर विश्लेषकों का दिमाग ठनका कि इन इस्तीफों के पीछे कहीं कुछ और चल रहा है. क्योंकि मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ व अन्य मंत्रियों के लिए अभी डेढ़ महीने का वक्त और था. शपथ ग्रहण के छह महीने के भीतर दोनों में से किसी एक सदन का सदस्य होना जरूरी होता है. लिहाजा, इसके लिए 19 सितंबर तक का समय भाजपा के हाथ में था. जहां तक संख्या बल का सवाल है, अब मुख्यमंत्री समेत पांच नेता आसानी से विधान परिषद के सदस्य हो जाएंगे.

अब सपाइयों के इस्तीफे का थोड़ा जायजा लेते चलें. सपा के डॉ. अशोक वाजपेयी का इस्तीफा बड़ा झटका था. इसके पहले विधान परिषद सदस्य यशवंत सिंह, बुक्कल नवाब और सरोजिनी अग्रवाल इस्तीफा दे चुके थे और मधुकर जेटली इस्तीफा देते-देते रह गए थे. सपा कोटे से एमएलसी बने बसपा नेता अंबिका चौधरी ने भी विधान परिषद सदस्य से अपना इस्तीफा दे दिया. बसपा के एमएलसी जयवीर सिंह पहले ही इस्तीफा दे चुके हैं. सपा के स्वयंभू अध्यक्ष अखिलेश यादव ने मुलायम और शिवपाल के प्रति वफादार होने के कारण डॉ. अशोक वाजेयी और अंबिका चौधरी जैसे नेताओं के प्रति हिकारत और उपेक्षा का भाव रखा. अंबिका चौधरी को मुलायम ने ही अखिलेश सरकार में कैबिनेट मंत्री बनवाया था. अखिलेश यादव ने पहले तो उनका राजस्व विभाग बदला फिर मंत्री पद से ही बर्खास्त कर दिया. पिता-चाचा-भतीजा क्लैश में अंबिका चौधरी पिता मुलायम और चाचा शिवपाल के साथ खड़े रहे. इससे नाराज अखिलेश ने अंबिका को सपा का टिकट नहीं दिया. इससे आजिज चौधरी ने फिस बसपा के टिकट से चुनाव लड़ा, लेकिन हार गए. अंबिका के बारे में भी कहा जा रहा है कि वे भी जल्दी ही भाजपा में शामिल होंगे. हालांकि इस्तीफे के बाद अंबिका ने कहा, 'मैं बसपा में खुश हूं. मुझे सपा ने एमएलसी बनाया था, इसलिए इस्तीफा दिया है. मैं बहनजी के साथ हूं.'

डॉ. अशोक वाजपेयी बड़ी मुश्किलों से विधान परिषद पहुंचे थे, लेकिन सरल स्वभाव के बुद्धिजीवी डॉ. अशोक वाजपेयी मुलायम, शिवपाल और अपनी उपेक्षा अधिक दिनों तक ढो नहीं पाए. डॉ. अशोक वाजपेयी मुलायम के पुराने वफादार साथियों में रहे हैं. मुलायम सरकार में वे शिक्षा मंत्री थे. लेकिन अखिलेश ने उन्हें अपने मंत्रिमंडल में जगह नहीं दी. डॉ. वाजपेयी समाजवादी परिवार में चले विवाद में शिवपाल के साथ खड़े रहे. अखिलेश को वाजपेयी की वफादारी नहीं बल्कि नरेश अग्रवाल जैसे नेताओं की अवसरवादिता पसंद थी. वाजपेयी और अग्रवाल दोनों हरदोई के हैं, लेकिन अखिलेश को चतुर नरेश पसंद आए. इस्तीफा देने के बाद डॉ. अशोक वाजपेयी ने कहा, 'नेताजी मुलायम सिंह यादव ने समाजवादी पार्टी की स्थापना की थी. लेकिन पार्टी में उनकी ही लगातार उपेक्षा की जा रही थी. ऐसे माहौल में पार्टी में बने रहने का कोई औचित्य नहीं था. उनकी उपेक्षा से मैं बहुत आहत हुआ हूं. अगर ऐसी स्थिति नहीं होती तो विधानसभा चुनाव में पार्टी को ऐसी शर्मनाक हार का सामना नहीं करना पड़ता.'

मेरठ की वरिष्ठ सपा नेता और विधान परिषद सदस्य सरोजिनी अग्रवाल का इस्तीफा अखिलेश यादव और आजम खान दोनों के लिए झटका देने वाला रहा. सरोजिनी अग्रवाल आजम खान की खास समर्थक बताई जाती थीं. सरोजिनी अग्रवाल ने भाजपा की सदस्यता भी ग्रहण कर ली. विधान परिषद में उनका कार्यकाल 2021 तक था. लेकिन इसे उन्होंने अपने पास नहीं रखा. सबसे पहले मुलायम ने ही उन्हें वर्ष 2007 में एमएलसी बनाया था. सरोजिनी अग्रवाल 1995 में जिला पंचायत अध्यक्ष भी रह चुकी हैं. सरोजिनी अग्रवाल को मेरठ जिले में सपा का एक बड़ा स्तंभ माना जाता था. वो पहले मुलायम सिंह यादव की खास थीं, बाद में आजम खां की खास बन गईं.

जानकार कहते हैं कि इस्तीफों का सिलसिला अभी जारी रहेगा. सपा और बसपा के कुछ और एमएलसी टूटने वाले हैं. इनमें आगरा के एक एमएलसी, एक पूर्व दर्जा प्राप्त मंत्री और एक अन्य एमएलसी का जाना तो तय ही बताया जा रहा है. जानकार कहते हैं कि मुलायम के कहने पर एमएलसी बनाए गए एक अल्पसंख्यक नेता की भी बातचीत हो रही है. ताबड़तोड़ इस्तीफों से बौखलाए अखिलेश यादव ने भाजपा पर सपा के एमएलसी तोड़ने का आरोप लगाया है. अखिलेश ने गुजरात में राहुल की कार पर हुए पथराव को इससे जोड़ते हुए कहा, 'भाजपा पत्थर फेंक रही है और एमएलसी तोड़ रही है.' इसी आशय का उन्होंने ट्वीट भी किया था और कहा था कि जिसे जाना है जाए, बहाने न बनाए. अखिलेश ने कहा, 'मुझे भी तो पता लगे कि बुरे दिनों में कौन मेरे साथ है!' अखिलेश के इस वक्तव्य पर सपा के लोग ही चुटकी लेते हैं और कहते हैं कि उन्होंने तो पार्टी और परिवार दोनों के लिए बुरे दिन ला दिए, अखिलेश अब उनका साथ क्यों नहीं दे रहे? अखिलेश की प्रतिक्रिया पर भाजपा ने भी पलटवार किया. भाजपा के प्रदेश प्रवक्ता शलभमणि त्रिपाठी ने कहा कि सपा के एमएलसी सपा की गलत नीतियों के कारण पार्टी छोड़कर भाग रहे हैं. इस पर अखिलेश को आत्ममंथन करना चाहिए और अपनी भूल सुधारनी चाहिए. ■

समाजवादी पार्टी के विधान परिषद सदस्यों के इस्तीफे धड़ाधड़ हुए, यशवंत सिंह, बुक्कल नवाब, सरोजिनी अग्रवाल फिर डॉ. अशोक वाजपेयी का सिलसिलेवार इस्तीफा सपा के स्वयंभू अध्यक्ष अखिलेश यादव के लिए सीरियल ब्लास्ट की तरह था. इन्हीं सीरियल धमाकों में मुलायम सिंह का पलट वार भी शामिल हो गया, जब उन्होंने लोहिया ट्रस्ट से अखिलेश के सारे समर्थकों को निकाल बाहर किया. मुलायम सिंह यादव की अध्यक्षता में पिछले दिनों हुई लोहिया ट्रस्ट की बैठक में मुलायम ने अखिलेश यादव के करीबी चार लोगों रामगोविंद चौधरी, अहमद हसन, उषा वर्मा और अशोक शाक्य को लोहिया ट्रस्ट से हटाने का फैसला सुनाया.

बुक्कल कहीं इसलिए तो नहीं चले गए भाजपा में!

सपा छोड़ कर भाजपा में शरीक हुए बुक्कल नवाब के बारे में तो कहा जा रहा है कि अनगिनत भूमि घोटालों और फर्जीवाड़ा में फंसे होने के कारण अपने बचाव के लिए बुक्कल नवाब ने भाजपा की शरण ली. पूर्व मुख्यमंत्री अखिलेश यादव ऐसा इशारा कर भी चुके हैं. हालांकि बुक्कल नवाब ने इस्तीफे के बाद कहा, 'मुझे सपा में घुटन हो रही थी. मुझे अखिलेश यादव की राजनीतिक समझ पर तरस आता है. मैं मुलायम का साथी था, हमेशा उनकी राजनीतिक समझ को सलाम करता हूं. सपा में अखिलेश यादव ने ही आग लगाई. परिवार एक हो सकता था, बहुत बचाया, पर अब नहीं. सपा जलता हुआ घर है, उसमें दोबारा जाने की इच्छा नहीं है.' इसके बरक्स बुक्कल नवाब के ख़िलाफ़ कई मामले चल रहे हैं. गोमती रिवर फ्रंट मामले में भी उन पर गंभीर आरोप हैं. गोमती नदी की जमीन को अपना बताने के लिए जाली दस्तावेज तैयार कराने के आरोप में बुक्कल नवाब पर वजीरगंज थाने में एफआईआर दर्ज है. इलाहाबाद हाईकोर्ट की लखनऊ खंडपीठ के आदेश पर बनी उच्च स्तरीय जांच समिति की रिपोर्ट के आधार पर तहसीलदार सदर ने यह मुकदमा दर्ज कराया. जांच समिति ने कहा है कि बुक्कल नवाब ने गोमती नदी के जियामऊ स्थित जमीन को अपना बताने के लिए 22 अगस्त 1977 के एक फैसले का सहारा लिया, जो संदेहास्पद है.

इस प्रकरण में इलाहाबाद हाईकोर्ट की लखनऊ पीठ के न्यायाधीश सुधीर अग्रवाल और राकेश श्रीवास्तव के समक्ष हाजिर होकर राजस्व विभाग के प्रमुख सचिव अरविंद कुमार ने बताया था कि अगस्त 1977 में बेगम फखरजहां की मृत्यु के बाद नायब तहसीलदार ने चिनहट ग्राम जियामऊ की जमीन को मजहर अली खान (बुक्कल नवाब) पुत्र आबिद अली खां निवासी शीशमहल के नाम कर दिया था. लेकिन हाईकोर्ट के निर्देश में बनी जांच समिति ने कहा कि अगस्त 1977 का निर्णय संदेहास्पद है. राजस्व रिकॉर्ड में दर्ज जानकारी भी संदेहास्पद है. इसके बाद ही इस मामले में एफआईआर कराई गई. एफआइआर दर्ज होने के बाद शिया सेंट्रल वक्फ बोर्ड ने बुक्कल नवाब को लखनऊ के वक्फ मोती मस्जिद के मुतवल्ली पद से बर्खास्त कर दिया. बुक्कल पर वक्फ की जमीन की प्लॉटिंग कर उसे बेचने का आरोप है. बुक्कल पर यह भी आरोप है कि उन्होंने अपनी पत्नी महजबीं आरा के नाम पर वक्फ की सम्पत्ति गिफ्ट कर दी. इस सम्पत्ति की कीमत 100 करोड़ रुपए बताई गई है. इसकी शिकायत मोती मस्जिद शिया ट्रस्ट ने की थी. वर्ष 2012 में वक्फ की सम्पत्ति के रोड किनारे वाले बेशकीमती हिस्से को बुक्कल नवाब ने अपनी पत्नी के नाम ट्रांसफर कर दिया, जिससे शिया वक्फ बोर्ड को सौ करोड़ का नुकसान हुआ. हालांकि बुक्कल इन आरोपों को सिरे से नकारते रहे हैं. ■

feedback@chauthiduniya.com

आधी आबादी का पैगाम नीतीश करें जमकर काम

नूतन/सुरभि/खुशबू

सूबे में जद यू और भाजपा गठबंधन की सरकार बनने के बाद लोगों के दिलों में फिर विकास की उम्मीदें जगी हैं. यूं तो समाज का हर तबका नीतीश सरकार से उम्मीदें लगाए है, लेकिन सबसे ज्यादा आशा यहां की महिलाओं को है. चौथी दुनिया की टीम ने कई क्षेत्रों की सफल महिलाओं से बातचीत कर यह जानने की कोशिश की कि नई सरकार से उनकी क्या-क्या उम्मीदें हैं. प्रस्तुत है अपने-अपने क्षेत्र की कुछ नामी-गिरामी महिलाओं से बातचीत के कुछ अंश...

हिन्दुस्तान समिति की बोर्ड अध्यक्ष सुषमा अग्रवाल का कहना है कि बिहार में गठबंधन टूटने के बाद सियासी माहौल काफी गरमा गया था. इसके बाद जो नई सरकार बनी है, उससे उम्मीद है कि बिहार को बहुत फायदा होगा. साथ ही विकास का लाभ आमलोगों तक भी पहुंचेगा. बहुत साल बाद केंद्र और बिहार में एक ही गठबंधन की सरकार है, इसलिए केंद्र की योजनाओं का पूरा फायदा बिहार को मिलने की उम्मीद है. अब धीरे-धीरे बिहार भी तरक्की की सीढ़ियां चढ़ेगा. सुषमा अग्रवाल को उम्मीद है कि नई सरकार में प्रदेश में व्यापारियों को काफी सुविधा मिलेगी. उनकी राय है कि सरकार समय-समय पर समाज के हर तबके के लोगों से संपर्क स्थापित करे और उनकी समस्याओं को सुने.

जूनियर इंजीनियर उषा कुमारी का कहना है कि नई सरकार से लोगों को बहुत उम्मीदें हैं. नीतीश सरकार बिहार में विकास लाएगी. गांव से शहर तक सभी का विकास होगा. यहां की सबसे बड़ी समस्या बेरोजगारी है, उम्मीद है कि नई सरकार युवाओं की इस समस्या पर ध्यान देगी. उषा कुमारी मानती हैं कि अभी प्रदेश में युवाओं के सामने काफी दिक्कतें हैं. अगर युवा खाली बैठे रहेंगे तो सूबे का विकास लगभग नामुमकिन है. इसलिए सरकार को चाहिए कि युवा शक्ति का पूरा उपयोग कर बिहार को आगे ले जाए.

पटना वीमेन्स कॉलेज की सहायक प्रोफेसर अनीता श्रीवास्तव का कहना है कि बिहार में शिक्षा के क्षेत्र में विकास होना चाहिए. शिक्षकों की दुर्दशा और शिक्षा व्यवस्था में सुधार की जरूरत है. प्राइमरी और सेकन्डरी शिक्षकों को अनिवार्य सेवा मुक्त करने की सरकार की नीतियां गलत हैं. उन्होंने कहा कि जब सरकार इन्हें नियुक्त कर रही थी, तब उनकी योग्यता का ध्यान क्यों नहीं रखा था? अब जरूरत है अधिक से अधिक योग्य शिक्षकों की बहाली हो और बिहार की शिक्षा व्यवस्था में आमूलचूल परिवर्तन हो. उन्होंने कहा कि पहले ही परीक्षा में नकल और मेरिट घोटाले को लेकर बिहार की काफी बदनामी हो चुकी है. इससे देश और दुनिया में सूबे का नाम खराब हुआ है, इसलिए सरकार को चाहिए कि कदाचारमुक्त परीक्षा का इंतजाम हो ताकि योग्य प्रतिभाओं को राज्य ही नहीं, बाहर भी सम्मान मिल सके.

आईसीआईसीआई की सहायक प्रबंधक श्वेता प्रताप का कहना है कि केंद्र और राज्य में एक सरकार के होने से जनता को काफी फायदा होगा. नीतीश जी ने बिहार को विशेष राज्य का दर्जा और विशेष केंद्रीय सहायता की जो मांग की थी, वह अब जल्द पूरी होनी चाहिए. विशेष राज्य का दर्जा मिलने से यहां काफी बदलाव होगा. यहां कई स्मार्ट सिटी बनकर तैयार होंगे, जिससे रोजगार की संभावनाएं बढ़ेंगी और युवाओं का प्रतिभा पलायन भी रुकेगा. श्वेता प्रताप का मानना है कि केवल बड़े-बड़े नालों को बनवाने से कुछ नहीं होगा, इसकी समय-समय पर साफ-सफाई भी करवानी होगी. नई सरकार को शहरों को साफ-सुथरा रखने के लिए समुचित प्रबंध करने होंगे.

दंत चिकित्सक शिवांगी सिंह का कहना है कि बिहार में नई सरकार से हम काफी खुश हैं. अगर नई सरकार सही दिशा में काम करती है, तो विकासपरक योजनाओं से युवाओं को रोजगार मिलेगा. उन्हें अब बाहर जाकर नौकरी ढूंढने की जरूरत नहीं होगी. रोजगार में बढ़ोतरी से ही बिहार का विकास संभव है. स्वास्थ्य के क्षेत्र में भी सुधार की जरूरत है. राज्य में कुछ मेडिकल कॉलेजों की जरूरत भी महसूस की जा रही है. लोगों को बिहार में ही उचित स्वास्थ्य सुविधाएं मिलें, तो मरीजों को इलाज के लिए राज्य से बाहर नहीं जाना होगा. समय रहते सरकार को इस पर ध्यान देने की जरूरत है.

समाज सेविका रेशमा प्रसाद का कहना है कि समाज में उपेक्षित किन्नरों की भी बहुत सारी समस्याएं हैं. नई सरकार से हमारे समाज को काफी उम्मीदें हैं. सुप्रीम कोर्ट का फैसला तो 2014 में आया, लेकिन इससे काफी पहले से ही मैं अपने समाज की समस्याओं को लेकर आवाज उठाती रही हूं. अब उम्मीद है कि

नई सरकार किन्नरों के कल्याण के बारे में भी विचार करेगी. समाज कल्याण विभाग की पहली समीक्षा बैठक में सरकार ने घोषणा की है कि किन्नर कल्याण बोर्ड का गठन होगा. हमलोग उम्मीद कर रहे हैं कि जल्द ही इस बोर्ड का गठन हो, ताकि हमारी समस्याएं भी सरकार तक पहुंच सके. दहेज प्रथा और बाल-विवाह जैसी कुरीतियों के खिलाफ जनता को जागरूक करने के लिए भी हम किन्नरों का सहयोग जरूरी है. हमें उम्मीद है कि सरकार इस दिशा में पहल करेगी, ताकि महिलाओं को इन बुराइयों के प्रति सजग किया जा सके.

यसकॉम इंडिया सॉफ्टेक प्राइवेट लिमिटेड की निदेशक सुमन प्रिया का कहना है कि पिछले दस सालों में बिहार का जिस गति से विकास होना चाहिए था, वह नहीं

हुआ है. नई सरकार के आने से कारोबारियों में भी उत्साह है. उम्मीद है कि बिहार में कुछ ऐसी परिस्थितियां बनेंगी, जिससे यह प्रदेश औद्योगिक प्रगति की दिशा में आगे बढ़ सकेगा. सुरक्षा, बिजली और बेहतर इंफ्रास्ट्रक्चर का विकास करना सरकार की प्राथमिकता होनी चाहिए.

उम्मीद की जानी चाहिए कि नई सरकार जनता के सर्वांगीण कल्याण के लिए कुछ बेहतर करेगी. मेट्रो रेल परियोजना का भी बिहार के लोगों को इंतजार है. इधर सड़कों की हालत भी खराब हो गई है. बारिश में तो आम लोगों का सड़कों पर चलना दूभर हो जाता है. टूटी हुई सड़कों की मरम्मत हो, ताकि लोगों को जल-जमाव से छुटकारा मिल सके. ■

feedback@chauthiduniya.com

कोसी में गौशाला की संपत्तियों पर कब्जा

संजय सोनी

कोसी प्रमंडल के सहरसा, मधेपुरा व सुपौल जिले के एक दर्जन से अधिक गौशालाओं की सैकड़ों एकड़ जमीन अतिक्रमणकारियों की भेंट चढ़ गई है. कोसी प्रमंडल के सहरसा मुख्यालय व कहरा प्रखंड के बरियाही में बनगांव गौशाला, सोनवर्षाराज, सिमरी बख्तियारपुर के सरडीहा, कोपरिया में संचालित है. इसी तरह मधेपुरा स्थित गौशाला, मुरलीगंज गौशाला व पुरैनी गौशाला के अलावा सुपौल जिले के सुपौल, लौकही व निर्मली में प्रमुख रूप से गौशाला का संचालन हो रहा है. इन सभी गौशालाओं की हालत कमोबेश एक जैसी ही है. इनके सैकड़ों एकड़ जमीन से गौचारा का प्रबंध भी मुश्किल से हो रहा है, वहीं माफिया व गौशाला प्रबंधक मोटी कमाई कर रहे हैं. इनमें सबसे खराब स्थिति बनगांव गौशाला की है. बनगांव गौशाला पर हमेशा राजनीतिक दल से जुड़े लोगों का ही कब्जा रहा है. बनगांव गौशाला की सम्पत्ति कौड़ी के भाव किराये पर दे दी गई है. गौशाला के लाखों की आमदनी सचिव से लेकर अध्यक्षीय कार्यालय के बाबुओं तक में बंट जाती है. गौशाला सचिव पद पर 70 के दशक तक स्व. मनीलाल तुलस्यिान के बाद स्व. रामदेव साह, स्व. सत्यनारायण प्रसाद गुप्ता व स्व. नरोत्तम तिवारी आसीन रहे.

इलाके में गौदान करने वालों की कोई कमी नहीं है. ऐसी गायों को गौशाला संचालक या तो बेच दे रहे हैं या फिर मवेशी हाट के माध्यम से तस्करी के जरिए बांग्लादेश भेज दिए जाते हैं. इस 11 सदस्यीय गौशाला समिति के पदेन अध्यक्ष सदर अनुमंडल पदाधिकारी होते हैं. गौशाला समिति के सचिव पद पर जब तक जनसंघ के सदस्य व आरएसएस के स्वयंसेवक स्व. सत्यनारायण प्रसाद गुप्ता रहे, तब तक पूरी ईमानदारी से गौशालाओं का संचालन होता रहा. इसके बाद जब भाजपा के

तत्कालीन जिला महामंत्री नरोत्तम तिवारी सचिव बने, तब शहर के चांदनी चौक स्थित करीब साढ़े आठ कट्ठा जमीन पर बने भवन व परिसर कबाड़खाने में तब्दील हो गए. गौशाला सचिव नरोत्तम तिवारी का पद पर रहने के दौरान ही 29 मार्च 2017 को निधन हो गया. 23 जुलाई 2017 को गौशाला अध्यक्ष सदर अनुमंडल पदाधिकारी सौरभ जोरवाल की अध्यक्षता में गौशाला की देखरेख के लिए सर्वसम्मति से भाजपा के पूर्व जिला अध्यक्ष शालीग्राम देव को सचिव नियुक्त किया गया. अभी गौशाला में चार गाय व एक बाछी है.

चांदनी चौक स्थित बनगांव गौशाला में वैध-अवैध तरीके से 25 भाड़ेदार हैं. इनमें बड़ा ट्रांसपोर्टर से लेकर टेंट व शामियाना समेत कई कारोबारी शामिल हैं. इन सभी भाड़ेदारों से मात्र 50 रुपए से लेकर 200 रुपए तक प्रतिमाह किराया लिया जाता है. जबकि बाजार का न्यूनतम किराया भी दो हजार रुपए से अधिक है. इसके बावजूद इन 25 किरायेदारों का 3 लाख 39 हजार 106 रुपए बकाया है. सबसे खास बात तो यह है कि गौशाला परिसर में अब एक इंच जगह भी खाली नहीं रह गया है, जहां गौ पालन हो सके. भाड़ेदार भी निर्धारित वर्गफीट से अधिक भूमि व भवन पर कब्जा जमाए हैं. इन लोगों के पास किराये का कोई एकरारनामा भी नहीं है. गौशाला की करोड़ों की सार्वजनिक सम्पत्ति को हथियाने के लिए दबंग यहां के कमरों व भूमि पर कब्जा बनाए हैं. बनगांव थाना क्षेत्र के बरियाही बनगांव गौशाला, बरियाही एवं सहरसा के चांदनी चौक स्थित बनगांव गौशाला की स्थापना बनगांव निवासी पं. अजब लाल खां ने 1921 में किया था. लोगों का कहना है कि उस दौरान गौशाला में सैकड़ों गाएं थीं. चूंकि बनगांव, पड़री, चैनपुर, नरियार, बलहा-गढिया, बरियाही सहित पूरे जिले के गांवों में गौ-दान की परम्परा थी. लेकिन जब से गौशाला के लिए सचिव का चुनाव होने लगा, तब से गायों की संख्या घटती गई. आज स्थिति यह है कि गौशाला में मात्र पांच गाएं ही बची हैं, जबकि बनगांव गौशाला, बरियाही के पास अपना 10 बीघा 18 कट्ठा जमीन है. इसमें दो बीघा जमीन पर सुधा डेयरी का दूध शीतलन केन्द्र व मवेशी अस्पताल का संचालन हो रहा है. सुधा डेयरी को दूध शीतलन केन्द्र के लिए मात्र तीन कट्ठा जमीन ही देना था. गौशाला की शेष जमीन को खेती के लिए प्रति बीघा 3 हजार रुपए सालाना की दर से बटायेदारों को सौंप दिया गया है. समिति गाय के चारे की भी कोई व्यवस्था नहीं करती है. गौशाला के वर्तमान सचिव व भाजपा के पूर्व जिला अध्यक्ष शालीग्राम देव बताते हैं कि गौशाला पर पूर्ण रूप से अतिक्रमणकारियों का कब्जा है. गौशाला जमीन की नापी कराने के बाद अतिक्रमणकारियों के खिलाफ कानूनी कार्रवाई की जाएगी. ■

मगध का बदल गया राजनीतिक समीकरण

कल तक साथ बैठने वाले हुए बेगाने

चौथी दुनिया ब्यूरो

बिहार में अचानक बदली सत्ता और राजनीतिक समीकरण ने सभी को हतप्रभ कर दिया है. शीर्ष नेतृत्व के बदले रुख से निचले स्तर के नेताओं को बड़ी परेशानी हो रही है. किसी को उम्मीद नहीं थी कि अचानक 24 घंटे में सब कुछ बदल जाएगा. कयास लगाए जा रहे थे कि महागठबंधन में केवल मतभेद रहेगा, लेकिन सरकार चलती रहेगी. लेकिन महागठबंधन में शामिल दलों के नेताओं के बयानों ने महागठबंधन को बिखेर दिया. जदयू के राष्ट्रीय अध्यक्ष मुख्यमंत्री नीतीश कुमार के अचानक फैसले ने मगध के निवासियों को भी हतप्रभ कर दिया. कल तक साथ बैठने वाले दलों के नेता आज एक-दूसरे के लिए अनजाने बन गए. नेताओं को डर है कि आलाकमान को गठबंधन टूटने के बाद गलत संदेश न जाए.

महागठबंधन टूटने और जदयू के एनडीए में शामिल होने के बाद मगध का भी राजनीतिक समीकरण बदल गया. यहां भी जदयू के लिए राजद और कांग्रेस अचानक अछूत हो गए. हालांकि महागठबंधन के दौरान भी तीनों दलों में आपसी सामंजस्य का अभाव नजर आता था. यहां महागठबंधन की कोई ऐसी बैठक नहीं हुई, जिससे पता चल सके कि राजद, जदयू और कांग्रेस के नेतागण एकजुट हैं. अब मगध के 26 विधानसभा क्षेत्रों का भी राजनीतिक समीकरण उलट-पलट हो गया है. 2015 विधानसभा चुनाव में मगध के 26 में से दस पर राजद, सात पर जदयू और तीन पर कांग्रेस को सफलता मिली थी. महागठबंधन के टिकट बंटवारे में राजद और जदयू ने 11-11 और कांग्रेस ने 4 विधानसभा क्षेत्रों से चुनाव लड़ा था. एनडीए को मात्र 6 विधानसभा क्षेत्रों में सफलता मिली थी, जिसमें भाजपा पांच और हम ने एक सीट पर जीत हासिल की थी. जबकि एनडीए में भाजपा 12, हम 7, रालोसपा 4 और लोजपा 3 सीटों पर चुनाव लड़ी थी. अब नए समीकरण में देखा जाए तो मगध में एनडीए और राजद 13-13 पर आ गया है. आनेवाले विधानसभा चुनाव में यह समस्या उठेगी कि गत चुनाव में जदयू के खिलाफ लड़ने वाले एनडीए के वे प्रत्याशी कहां जाएंगे, जो दूसरे स्थान पर थे. एक-दो को कहीं इधर-उधर कर भी दिया जाए तो बाकी नेताओं का क्या होगा? यह सवाल अभी से उठने लगा है. जहानाबाद के घोषी विधानसभा क्षेत्र से जदयू के कृष्णनंदन वर्मा विधायक हैं और अभी शिक्षा मंत्री बनाए गए हैं. महागठबंधन में लोक स्वास्थ्य अभियंत्रण मंत्री थे. इनके खिलाफ एनडीए की ओर से हम के बाहुबली नेता जगदीश शर्मा के पुत्र राहुल कुमार चुनाव लड़े थे. आनेवाले चुनाव में उम्मीद है कि जदयू के कृष्णनंदन वर्मा ही यहां से एनडीए के प्रत्याशी होंगे. इसी प्रकार औरंगाबाद के नवीनगर विधानसभा क्षेत्र से जदयू के विरेन्द्र कुमार सिंह विधायक हैं. यहां से एनडीए प्रत्याशी के रूप में भाजपा के गोपाल नारायण सिंह चुनाव लड़े थे. अगले चुनाव में इन्हें नवीनगर से टिकट की समस्या होगी. रफीगंज से जदयू के अशोक कुमार सिंह विधायक हैं. यहां से एनडीए प्रत्याशी के रूप में लोजपा के प्रमोद कुमार सिंह चुनाव लड़े थे. आगामी चुनाव में इन्हें भी नई जमीन तलाश करनी होगी.

जीतन राम मांझी

जगदीश शर्मा

उदय नारायण चौधरी

गोपाल नारायण सिंह

गया जिले के शेरघाटी से जदयू के विनोद यादव लगातार दूसरी बार विधायक हैं. यहां से एनडीए प्रत्याशी के रूप में हम के मुकेश कुमार यादव उर्फ कुष्णा यादव चुनाव लड़े थे. इसी प्रकार टिकारी से जदयू के अभय कुमार सिन्हा विधायक हैं. यहां से पूर्व मंत्री अनिल कुमार एनडीए प्रत्याशी के रूप में हम से चुनाव लड़े थे. अरवल जिला के कुर्था विधानसभा क्षेत्र से जदयू के सत्यदेव सिंह विधायक हैं. यहां से एनडीए प्रत्याशी के रूप में रालोसपा के अशोक कुमार वर्मा चुनाव लड़े थे. चिंता की बात है कि अब ये कहां जाएंगे. ऐसी बात नहीं है कि सिर्फ एनडीए के पूर्व दलों के नेताओं को ही चुनावी समीकरण की समस्या से जूझना पड़ेगा, बल्कि जदयू के भी कई दिग्गजों को नए समीकरण से परेशानी बढ़ी है. इसमें सबसे पहले आते हैं पूर्व विधानसभा अध्यक्ष उदय नारायण चौधरी. इनका क्षेत्र है गया जिले का इमामगंज. यहां से गत चुनाव में पूर्व मुख्यमंत्री और हिन्दुस्तानी अवाम मोर्चा (हम) के राष्ट्रीय अध्यक्ष जीतन राम मांझी विजयी हुए थे. उदय नारायण चौधरी दूसरे स्थान पर रहे थे. अब इन्हें भी आगामी चुनाव में नई जगह देखनी होगी. गुरुआ से भाजपा के राजीव नंदन विधायक हैं. महागठबंधन प्रत्याशी के रूप में यहां से पूर्व विधायक रामचन्द्र प्रसाद सिंह जदयू से चुनाव लड़े थे. अब इन्हें समस्या होगी. नवादा जिले के हिसुआ से भाजपा के अनिल सिंह विधायक हैं. जदयू के कौशल यादव यहां से गत चुनाव में महागठबंधन के प्रत्याशी थे. इनके लिए थोड़ी राहत है कि नवादा से एनडीए के प्रत्याशी हो सकते हैं क्योंकि गत चुनाव में रालोसपा के इन्द्रदेव प्रसाद एनडीए प्रत्याशी थे. जदयू इस सीट को अपने लिए आनेवाले चुनाव में ले सकती है. फिलहाल राजद के राजवल्लभ यादव यहां से विधायक हैं और एक नाबालिग लड़की से रेप के मामले में जेल में हैं. वारसलीगंज से भाजपा की अरुणा देवी विधायक हैं. गत चुनाव में महागठबंधन की ओर से जदयू के प्रदीप कुमार प्रत्याशी थे. अब इनकी भी समस्या है कि आने वाले विधानसभा चुनाव में कहां जाएंगे.

बिहार में नए राजनीतिक समीकरण ने मगध में सभी दलों के नेताओं को असहज कर दिया है. प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी, भाजपा के राष्ट्रीय अध्यक्ष अमित शाह और बिहार भाजपा के वरिष्ठ नेता सुशील कुमार मोदी को कोसने वाले जदयू के नेताओं ने अचानक चुप्पी साध ली है या फिर बोल बदल लिए हैं. इसी प्रकार नीतीश कुमार को भी उल्टा-पुल्टा बोलने वाले एनडीए के नेताओं ने अपनी भाषा बदल ली है. अब वे नीतीश कुमार की घर वापसी बताकर उनका स्वागत कर रहे हैं.■

feedback@chauthiduniya.com

भीड़ के निशाने पर ख़ाकी

वाल्मीकि कुमार

आम-अवाम की सुरक्षा के लिए जिम्मेदार पुलिस इन दिनों खुद हिंसक भीड़ की शिकार हो रही है. ऐसे में नक्सलियों व अपराधियों से दो-दो हाथ करने वाली पुलिस की कार्यशैली पर अब सवाल उठने लगे हैं. अभी तक पुलिस जन सहयोग से घटनाओं की जांच कर दोषियों को सलाखों के पीछे डालती रही है. मगर अब हालात बदल चुके हैं. अब लोग हिंसक घटना को अंजाम देकर भाग निकलने वाले अपराधियों के खिलाफ आंदोलित नहीं होते, बल्कि भीड़ के निशाने पर स्थानीय पुलिस ही होती है.

उत्तर बिहार के मुजफ्फरपुर, समस्तीपुर, सीतामढ़ी, शिवहर व मोतिहारी समेत अन्य जिलों में विधि-व्यवस्था की समस्या एक गंभीर चुनौती बन गई है. हाल में बिहार के कुछ जिलों में पुलिस पर हमले की घटनाओं में तेजी आई है. पिछले माह समस्तीपुर जिले के कर्पूरी ग्राम में एक गिट्टी व्यवसायी की हत्या के बाद स्थानीय लोगों ने उग्र प्रदर्शन किया था. मौके पर पहुंची पुलिस के साथ भीड़ ने न केवल बदसलूकी की, बल्कि उनके साथ मारपीट कर हथियार छीनने के प्रयास भी किए. मुजफ्फरपुर जिले के चंदवारा में वक्फ बोर्ड की जमीन को लेकर उत्पन्न विवाद के बाद मौके पर पहुंचे एसडीओ, डीएसपी समेत पुलिसकर्मियों पर भीड़ ने पथराव कर जख्मी कर दिया. वहीं सीतामढ़ी जिले में कांटा चौक पर बस-ट्रक में हुई टक्कर के बाद घटनास्थल पर पहुंची नगर थाना पुलिस को भीड़ ने खदेड़ दिया था. इस दौरान भीड़ ने टाउन इंस्पेक्टर की पिटाई भी कर दी थी. तब वरीय अधिकारी अतिरिक्त बल के साथ मौके पर पहुंचे व किसी तरह भीड़ को नियंत्रित किया. शिवहर जिले के पुरनहिया प्रखंड के बसंतपट्टी गांव में बाइक की टक्कर से एक बच्चे की मौत हो गई थी. जब स्थिति को नियंत्रित करने के लिए डीएसपी मौके पर पहुंचे, तब लोगों ने उन्हें बंधक बना लिया. इसके बाद भीड़ ने आधा दर्जन से अधिक सैप जवानों की पिटाई कर जख्मी कर दिया. इधर मोतिहारी जिले में नीरपुर गांव के लोगों ने हिरासत में लिए गए एक आरोपी को छोड़ने को लेकर चिरैया थाना के मुंशी की थाने में घुसकर पिटाई कर दी. यह तो महज एक उदाहरण है, जबकि छोटी-छोटी कई ऐसी घटनाएं हैं, जो सुर्खियां नहीं बन पाईं. आलम यह है कि अपराधियों के दिलों से अब पुलिस का खौफ समाप्त होता जा रहा है. इस हालत में बेहतर सुरक्षा व्यवस्था की कल्पना भी मुश्किल प्रतीत होती है.

सीतामढ़ी में पुलिस की पिटाई करते लोग

पुलिस पर बढ़ रहे हमलों पर शिवहर जिले के वरीय सामाजिक कार्यकर्ता सुनील सिंह बताते हैं कि अब पुलिस का कार्य न्यायसंगत नहीं रह गया है. गरीब थानों में न्याय की गुहार लगाते रहते हैं और पुलिस एफआईआर तक दर्ज नहीं करती. इसके विपरीत माफिया व अपराधी तत्व को बचाने में ही जुट जाती है. थाना में बिना पैसा लिए न तो मामला दर्ज होता है और न ही सही तरीके से मामले की जांच होती है. यही पुलिस के प्रति समाज में आक्रोश का कारण है. पुलिस और पब्लिक के बीच संवादहीनता की स्थिति भी इसके लिए जिम्मेदार है. फिलहाल यह आवश्यक है कि पुलिस और आम लोगों के बीच बेहतर संबंध कायम हों और इसके लिए समाज, प्रशासन और सरकार के स्तर पर भी सार्थक पहल की जानी चाहिए. नहीं तो पुलिस पर जनता का भरोसा टूट जाना समाज के लिए घातक साबित होगा.■

feedback@chauthiduniya.com

शिवहर के बसंतपट्टी में भीड़ के हमले से घायल डीएसपी व जवान

मासिक के प्रति सजगता
सेहतनामा
ariskon Pharma Pvt.Ltd.
An ISO 9001 : 2008 Certified Co.

डॉ. रीना सिंह
मगध मेडिकल कॉलेज गया
शिवम नर्सिंग होम, गया

गया के शिवम नर्सिंग होम की डॉ. रीना सिंह ने महिलाओं में मासिक धर्म में बरती गयी कोताही को लेकर चिंतित दिखीं और बतायी की महिलाएँ पीरियड के समय होने वाले दर्द को इग्नोर कर देती हैं हलांकि हल्का दर्द सामान्य बात है लेकिन असहनीय दर्द या थोड़ा सा भी दर्द महसूस हो तो महिलाओं को गायनो डॉक्टरनी से सम्पर्क अवश्य करना चाहिए। अक्सर महिलाएं पेट दर्द की शिकायत करती हैं और कुछ तो दर्द की गोली भी खाती हैं। दर्द का एक प्रमुख कारण बच्चेदानी में सिकुड़न माना गया है। लेकिन महिलाओं में बाद में भी यदि इस तरह दर्द की समस्या आये तो अवश्य गायनो डॉक्टरनी से सम्पर्क करना चाहिए। यह यूटरस में बीमारी का संकेत है। कई महिलाओं को अति मासिक (ज्यादा रक्त स्राव) की समस्या होती है उसके प्रति भी जागरूक होना आवश्यक है। एक स्वस्थ्य नारी की पहचान उसके मासिक धर्म के नियत समय पर होना है। इसका चक्र 28 दिनों का होता है और 50 के उम्र के आसपास बन्द हो जाता है। निश्चित समय पर या मासिक अन्तराल पर औरतों में होने वाले अति रक्त प्रवाह को जो लम्बे समय तक होता है उसे मेनोराजिया कहते हैं (जब रक्त 80 एम.एल. या 7 से 8 दिनों तक हो) सामन्य तौर पर यह समझा जा सकता है कि मासिक धर्म के समय अतिरक्त स्राव हो तो आप एक अच्छे ग्यानोकोलोजिस्ट से सम्पर्क करें और इसका इलाज करायें इनका मानना है कि बच्चे एक या दो ही रखें इससे अधिक होने पर भी अति रक्तस्रव की समस्या हो सकती है बच्चेदानी में संक्रमण न पकड़ने दें। इसके लिए मासिक पिरियड के समय पैड का प्रयोग करें। यदि देहात में हैं तो साफ सूती कपड़े को गर्म पानी में उबालकर फिर सूखा कर ही इसे प्रयोग करें। डॉ. राखी ने महिलाओं को सलाह देते हुआ बताया कि इसके प्रति सजग रहें और मासिक की अनियमितता के अलावा यदि अति रक्तस्राव की समस्या है तो तुरन्त अच्छे ग्यानोकॉलोजिस्ट से सम्पर्क करें। फास्ट फूड की लत, हमेशा तनाव में रहना या शराब पीना या गर्भाशय से सम्बन्धित कोई बीमारी होना. मासिक के दौरान भी कई महिलाओं को बहुत ज्यादा दर्द का सामना करना पड़ता है। आइये अब जानते हैं कुछ कुछ घरेलू उपाय •करेले का नियमित सेवन करें. • पीरियड के दौरान ड्राई फ्रूट्स और नट्स खाएँ. ग्रीन टी पिएँ. • इस दौरान आपको केला खाना चाहिए, इससे आपको नींद भी अच्छी आएगी और दर्द भी दूर होगा • पालक, पत्ता गोभी, कद्दू आदि खाएँ. •कब्ज पैदा करने वाले चीज पीरियड्स के दौरान न खाएँ. • खट्टी चीजों, भूने हुए चीजों और प्रोटीन से भरी दालों का सेवन न करें. ▪ भारती

Carbo - XT Drops Susp.
Ferrous Ascorbate100 mg +
Folic Acid 1.5 mg +
Vitamine B5 mcg Tab.

A Colic Drops.
Simethocone Emulsion, Dil Oil Fennel Oil

Siliplex Syp.
Silymarin, vitamin B Complex
Calcuium & Lactic Acid Bacillus

Oflogyl-OZ Susp. (60 ml)
Ofloxacine 100 mg &
Omindazole 125 mg

Acoba Syp.
Methylocobalamine, Lycopene, Multivitamine
Multimineral & Antioxident

NOKSIRA Pharma Pvt.Ltd.
A Division of AriskonPharma

CRM
TMT BAR

ISO 9001 - 2000 Certified Co.
IS:1786:2008
CM/L-5746178
Fe-500
मुख्य खूबियाँ
• बचत
• मजबूती
• शानदार फिनीश
Mfg. : CITY ROLLING MILLS PVT. LTD., PATNA
HELPLINE : 0612-2216770

टिप्पणी से कठघरे में कवि

अनंत विजय

भारत भूषण अग्रवाल पुरस्कार के एलान के साथ ही हिंदी साहित्य में एक उबाल सा उठा है. पुरस्कार के लिए चयनित युवा कवि अच्युतानंद मिश्र की कविताओं पर बात होने के बजाए विमर्श गैर-साहित्यिक मसले पर शुरू हो गया. भारत भूषण अग्रवाल पुरस्कार हर वर्ष हिंदी के पैंतीस साल तक की उम्र के कवि को दिया जाता है. प्रक्रिया के मुताबिक निर्णायक मंडल का एक सदस्य अपनी बारी आने पर कवि का चयन करता है. इस वर्ष चयन की बारी हिंदी की वरिष्ठ कवयित्री अनामिका की थी. उन्होंने अच्युतानंद मिश्र की कविता 'बच्चे धर्मयुद्ध लड़ रहे हैं' के लिए ये पुरस्कार देने का फैसला किया. यहां तक तो सबकुछ सामान्य लग रहा था. एलान भी हो गया. अच्युतानंद को बधाई आदि का दौर शुरू ही हुआ था कि अचानक फेसबुक पर एक कवि अवतरित हुए और उन्होंने अनामिका पर बेहद अमर्यादित टिप्पणी कर दी. फेसबुक पर इस टिप्पणी के आते ही बवाल मच गया. लगभग चरित्रहनन करते इस पोस्ट को लेकर हिंदी की कई लेखिकाओं ने अपना विरोध जताना शुरू कर दिया. बाद में कवि जी ने अनामिका पर की गई अपनी टिप्पणी को हटा दिया, लेकिन तबतक जो नुकसान होना था वह हो गया. कवि महोदय की पोस्ट वायरल हो चुकी थी. स्क्रीन शॉट साझा किए जा रहे थे. पक्ष-विपक्ष में लोग अपनी बातें कहने लगे थे. कुछ लेखिकाएं खुद को निष्पक्ष दिखने-दिखाने के चक्कर में नापतौल कर पोस्ट लिख रही थीं. मसला ये कि कई लोग खुलकर विरोध करने से बचते रहे थे. कवि जी की पोस्ट को लेकर एक नए-नए ललबबुआ ने तो पूरी लेखिका बिरादरी को ही कूढ़मगज करार दे दिया. ललबबुआ की परेशानी ये बताई जा रही है कि उसको उम्मीद थी कि इस वर्ष का भारत भूषण अग्रवाल पुरस्कार उसको मिलेगा, लेकिन अच्युतानंद को देकर अनामिका ने उसका सपना तोड़ दिया. कोई भी शख्स जब सपने को सच माने बैठा हो और जब उसके सच होने का समय आए और सपना टूट जाए, तो बौखलाहट स्वाभाविक है. बौखलाहट में साहित्य के खर पतवारों में भी हलचल होने लगी और मर्यादाएं तार-तार होने लगीं. इस साहित्यिक घटना को बताने का मकसद समकालीन हिंदी साहित्य में विमर्श के गिरते स्तर की ओर इशारा करना था. हिंदी के एक वरिष्ठ आलोचक अपनी बातचीत में हमेशा कहा करते हैं कि समकालीन हिंदी साहित्य इस वक्त बजबजा रहा है. उनकी बात को आगे बढ़ाते हुए ये कहा जा सकता है कि साहित्यिक परिदृश्य ना केवल बजबजा रहा है बल्कि गुड़ की राब की तरह खदबदा रहा है. यह मसला सिर्फ साहित्यिक विमर्श के गिरते स्तर तक नहीं पहुंचता है बल्कि इस घटना के कई छोर हैं, जिनपर साहित्य से जुड़े लोगों को गंभीरता से विचार करना होगा.

लेखिकाओं के बारे में अमर्यादित और अश्लील टिप्पणी करने का मंच फेसबुक बना. फेसबुक इस वक्त हिंदी साहित्य में एक अनिवार्य उपस्थिति की तरह है. लगभग हर तरह के मसले फेसबुक पर ही सबसे पहले नमूदार होते हैं, सूचनाओ से लेकर विवाद तक, गंभीर विमर्श से लेकर हल्की फुल्की बातों तक. यहां तक कि

अच्युतानंद मिश्र

वरिष्ठ कवयित्री अनामिका

लेखकों के व्यक्तिगत मामले भी फेसबुक पर सार्वजनिक होते रहते हैं. फेसबुक लेखकों के लिए पाठकों से जुड़ने का एक बेहद उपयोगी मंच है. नई नई रचनाएं और विचार, जिनको पत्र-पत्रिकाओं में जगह नहीं मिल पाती हैं, उनको फेसबुक पर स्थान तो मिलता ही है, एक पाठकवर्ग भी मिलता है. लेकिन फेसबुक पर कुछ भी लिखने की जो आजादी है, वो इस मंच को कई बार एक अराजक मंच भी बना देता है. यह अराजकता फेसबुक की सबसे बड़ी खामी है. इस अराजक आजादी का फायदा कुछ लोग उठाते हैं, एक दूसरे को नीचा दिखाने और अपमानित करने के लिए. फेसबुक पर मौजूद साहित्य से जुड़े लोगों को इस अराजकता से निपटने के उपायों पर विचार करना चाहिए. दूसरी बात जो इस प्रकरण में उभर कर सामने आई, वो ये कि लेखिकाओं पर हो रहे हमलों को अलग-अलग लेखिकाओं ने अपने-अपने नजरिए से देखने की कोशिश की. किसी ने सिर्फ अफसोस जाहिर किया तो किसी को आश्चर्य हुआ. अफसोस और आश्चर्य के बीच विरोध गुम हो गया. लानत मलामत तो दूर की बात.

लेखिकाओं के बारे में अमर्यादित और अश्लील टिप्पणी करने का मंच फेसबुक बना. फेसबुक इस वक्त हिंदी साहित्य में एक अनिवार्य उपस्थिति की तरह है. लगभग हर तरह के मसले फेसबुक पर ही सबसे पहले नमूदार होते हैं, सूचनाओ से लेकर विवाद तक, गंभीर विमर्श से लेकर हल्की फुल्की बातों तक. यहां तक कि लेखिकाओं के व्यक्तिगत मामले भी फेसबुक पर सार्वजनिक होते रहते हैं. फेसबुक लेखकों के लिए पाठकों से जुड़ने का एक बेहद उपयोगी मंच है. नई-नई रचनाएं और विचार, जिनको पत्र-पत्रिकाओं में जगह नहीं मिल पाती हैं, उनको फेसबुक पर स्थान तो मिलता ही है, एक पाठक वर्ग भी मिलता है. लेकिन फेसबुक पर कुछ भी लिखने की जो आजादी है, वो इस मंच को कई बार एक अराजक मंच भी बना देता है. यह अराजकता फेसबुक की सबसे बड़ी खामी है. इस अराजक आजादी का फायदा कुछ लोग उठाते हैं, एक दूसरे को नीचा दिखाने और अपमानित करने के लिए. फेसबुक पर मौजूद साहित्य से जुड़े लोगों को इस अराजकता से निपटने के उपायों पर विचार करना चाहिए.

आज समाज में जिस तरह की प्रवृत्ति देखने को मिल रही है, उसका भी प्रकटीकरण इस पूरे मसले में हुआ है. आज हमारी संवेदनाएं इतनी कम या खत्म हो गई हैं कि अब वो समाज में भी नहीं दिखतीं. कई बार ऐसी खबरें आती हैं कि दुर्घटना का शिकार व्यक्ति बीच सड़क पर तड़पता रहा, लेकिन उसकी मदद के लिए कोई आगे नहीं आया. पूरे देश ने टीवी पर ऐसी कई तस्वीरें देखी हैं. ऐसी ही संवेदनहीनता साहित्य की दुनिया में भी दिखाई देने लगी है कि कोई अमुक के साथ गाली गलौच कर रहा है, तो हम उस पचड़े में क्यों पड़ें. इस प्रवृत्ति के बढ़ने से हमलावरों के हौसले बुलंद होते रहते हैं. वे जब चाहें, जिसे चाहें अपमानित करते रहते हैं और जब दबाव बनने लगता है, तो पोस्ट डिलीट कर अपनी शराफत का ढिंढोरा पीटना शुरू कर देते हैं. साहित्य में बढ़ रही इस संवेदनहीनता पर भी साहित्य से जुड़े लोगों को विचार और मंथन करना चाहिए. क्या साहित्य समाज स्त्री विरोधी मानसिकता वाले ऐसे लोगों को चिन्हित कर उसके सामूहिक बहिष्कार आदि के बारे में विचार नहीं कर सकता है. कम से कम फेसबुक पर तो बहिष्कार की पहल हो.

इस पूरे घटनाक्रम से लेखक संगठनों का भी महिलाओं को लेकर रवैया एक बार फिर उजागर हो गया. अनामिका के अपमान के मसले पर प्रगतिशील लेखक संघ, जनवादी लेखक संघ और जन संस्कृति मंच की तरफ से स्तंभ लिखे जाने तक कोई बयान सामने नहीं आया. इतने समय तक लेखक संगठनों की चुप्पी उनकी कार्यप्रणाली पर सवाल खड़े करती है. बयानवीर जनवादी लेखक संघ का इस मसले पर कोई प्रेस रिलीज जारी नहीं करना भी उनको कठघरे में खड़ा कर गया. अब सवाल यही उठता है कि लेखक संगठन क्यों चुप हैं? दरअसल ये लेखक संगठन कोई भी स्टैंड लेने के पहले अपने-अपने पैतृक राजनीतिक दलों का मुंह जोहते हैं. ऐसा प्रतीत होता है कि इस मसले पर इन लेखक संगठनों के राजनीतिक आकाओं की अबतक कोई राय बन नहीं पाई, लिहाजा उनकी तरफ से किसी भी तरह की कोई प्रतिक्रिया नहीं आई. बात-बात में अभिव्यक्ति की आजादी पर खतरा देखने वाले इन लेखक संगठनों को अपनी ही जमात की एक वरिष्ठ लेखिका पर हुई वाचिक हिंसा से किसी प्रकार का कोई खतरा नहीं दिखना इनके दोहरे रवैये को उजागर करता है. दरअसल इस मसले में इनका भी कोई दोष नहीं है, इस विचारधारा के जो भी नायक रहे हैं उनकी महिलाओं को लेकर क्या राय या कारनामे रहे हैं, ये जगजाहिर है. चाहे वो माओ हों, चाहे स्टालिन या लेनिन या फिर क्यूबा के कम्युनिस्ट तानाशाह फिडेल कास्त्रो. लेकिन ये लेखक संगठन इस बात को भूल जाते हैं कि ये भारत है, जहां महिलाओं का सम्मान सर्वोच्च प्राथमिकता रही है. इन लेखक संगठनों के अप्रासंगिक होने की वजह भी इन प्राथमिकताओं को नहीं समझ पाना रहा है.

भारतीय लेखन में ज्यादा पीछे नहीं जाकर अगर हम जयशंकर प्रसाद की कामायनी को ही देखें, तो उन्होंने अपनी रचनाओं में स्त्री को भरपूर सम्मान दिया है. कामायनी की मूल आत्मा में मनुष्यता की चिंता है. वहां जब देव संस्कृति की बात होती है, तो यह बताया जाता है कि उस संस्कृति में विलासिता की वजह से, स्त्री की अवमानना की वजह से या फिर कह सकते हैं कि स्त्री को सिर्फ विलासिता की वस्तु समझने की वजह से देवों को दंडित करने के लिए उस संस्कृति को लगभग समाप्त कर दिया. कामायनी का जो चित्रण हुआ है वो अद्भुत है, वह विलासिता की देवी के रूप में नहीं बल्कि ममता की प्रतिमूर्ति के रूप में, करुणा से भरी हुई श्रद्धा के रूप में सामने आती है. अनामिका जी का अपमान करनेवाले कवि हैं, उनको अपनी परंपरा का तो ज्ञान होगा ही, भले ही लेखक संगठनों को ना हो, क्योंकि उनका रिमोट कंट्रोल तो कहीं और होता है. प्रसाद जी ने तो अपने नाटक 'ध्रुवस्वामिनी' में भी स्त्री अस्मिता का प्रश्न उठाया था. यह सिलसिला आगे भी चलता रहा, लेकिन कवि जी को ना तो अपनी परंपरा की फिक्र है ना ही लेखिकाओं की. इसके पहले भी वो एक अन्य कवयित्री को लेकर अनाप शनाप टिप्पणी कर चुके हैं. अगर हम देखें, तो साहित्य में महिलाओं को लेकर इस तरह की घटनाएं होती रही हैं लेकिन मजबूती के साथ प्रतिरोध नहीं होता है. लेखिकाओं को एकजुट होकर स्टैंड लेना होगा, रचनाओं से आगे जाकर व्यवहार में भी. ■

anant.ibn@gmail.com

स्वच्छ भारत अभियान में आरटीआई की भूमिका

चौथी दुनिया ब्यूरो

कई लोगों को ये भ्रम होता है कि आरटीआई सिर्फ क़ानूनी मसलों के समाधान से जुड़ा है, जबकि असलियत ये है कि आरटीआई की सहायता से आप अपने और अपने आस-पास की समस्याओं का हल भी तलाश सकते हैं. जनहित से जुड़े किसी भी सरकारी कार्य के निरीक्षण का आपको हक है. आप आरटीआई का इस्तेमाल कर के अपने आस-पास के उन सरकारी कार्यों की दशा-दिशा की जानकारी ले सकते हैं, जो आपके हित से जुड़े हैं. सड़क-सामुदायिक भवन के निर्माण कार्यों से लेकर नालों की साफ सफाई और कूड़ेदान से कूड़ा उठाने से सम्बन्धित जानकारियां भी आप आरटीआई के माध्यम से हासिल कर सकते हैं. अगर पिछले कई दिनों से आपके घर के आस पड़ोस वाले कूड़ेदान से कूड़ा नहीं उठाया जा रहा हो और आप स्थानीय प्रतिनिधि से शिकायत करके थक चुके हों, तो इस मामले में भी आप आरटीआई का सहारा ले सकते हैं. इस मामले में आरटीआई के माध्यम से आपको ये भी जानकारी मिल सकती है कि उक्त कूड़ेदान से कूड़ा उठाने की जिम्मेदारी किन लोगों की है और इसके लिए कितनी और कौन सी गाड़ियों का इस्तेमाल होता है. ऐसा कर के आप स्वच्छ भारत निर्माण में भी अपना योगदान दे सकते हैं. इस अंक में हम आपको बता रहे हैं कि आप आरटीआई की सहायता लेकर किस तरह कूड़ेदान की सफाई से सम्बन्धित जानकारी प्राप्त कर सकते हैं.

सूचना का अधिकार
RIGHT TO INFORMATION

कूड़ेदान की सफाई नहीं होना

सेवा में,
लोक सूचना अधिकारी
(विभाग का नाम)
(विभाग का पता)

विषय : *सूचना के अधिकार अधिनियम, 2005 के तहत आवेदन.*

महोदय,

कूड़ेदान का पता:

उपर्युक्त कूड़ेदान से सम्बंधित निम्नलिखित सूचनाएं उपलब्ध कराएं:

1. उस डिपो का पता बताएं, जहां से लोडर तथा ट्रक इस कूड़ेदान के लिए भेजे जाते हैं?
2. उन लोडर तथा ट्रक का नंबर बताएं, जो इस कूड़ेदान से कूड़ा उठाने के लिए नियुक्त हैं?
3. दिनांक .....से ..... के बीच डिपो के वीट रजिस्टर में दर्ज इन गाड़ियों के डिपो छोड़ने तथा डिपो में वापस आने के समय का पूरा विवरण उपलब्ध कराएं?
4. उन सभी कूड़ेदानों का पता बताएं, जहां का कूड़ा उपर्युक्त समय के दौरान इन गाड़ियों ने उठाया?
5. इस दौरान प्रतिदिन इन गाड़ियों द्वारा लगाए गए चक्करों का विवरण दें?
6. इस दौरान प्रत्येक चक्कर में इन गाडियों द्वारा उठाए गए कूड़े के वजन का विवरण दें?
7. उपर्युक्त कूड़ादान पिछले ..... दिनों से साफ नहीं किया गया है. इस दौरान इस क्षेत्र के सेनेटरी इंस्पेक्टर द्वारा भेजी गई प्रतिदिन के बैलेंस रिपोर्ट की प्रति उपलब्ध कराएं?
8. क्या उपर्युक्त बैलेंस रिपोर्ट में इस बात का उल्लेख है कि इस दौरान कूड़ेदान का कूड़ा नहीं उठाया गया? यदि नहीं, तो सम्बंधित क्षेत्र के सेनेटरी इंस्पेक्टर ने इसका उल्लेख क्यों नहीं किया?

मैं आवेदन फीस के रूप में 10 रुपए अलग से जमा कर रहा/रही हूं.

या

मैं बी.पी.एल. कार्ड धारी हूं, इसलिए सभी देय शुल्कों से मुक्त हूं. मेरा बीपीएल कार्ड नं.....है.

यदि मांगी गई सूचना आपके विभाग/कार्यालय से सम्बंधित नहीं हो, तो सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 की धारा 6 (3) का संज्ञान लेते हुए मेरा आवेदन सम्बंधित लोक सूचना अधिकारी को पांच दिनों की समयावधि के अन्तर्गत हस्तान्तरित करें. साथ ही अधिनियम के प्रावधानों के तहत सूचना उपलब्ध कराते समय प्रथम अपील अधिकारी का नाम व पता अवश्य बताएं.

भवदीय
नाम:
पता:
फोन नं:
संलग्नक:
(यदि कुछ हो)

feedback@chauthiduniya.com

अगर आपके पास आरटीआई से संबंधित कोई ख़बर या सवाल है, तो हमें इमेल करें:
rti@chauthiduniya.com

जन्मदिन विशेष

कुर्बानी के लिए सदैव तत्पर रहने वाला क्रांतिकारी शिवराम हरि राजगुरु

जन्मदिन- 24 अगस्त 1908
पुण्यतिथि- 23 मार्च 1931

चौथी दुनिया ब्यूरो

कहा जाता है कि सांडर्स की हत्या के समय राजगुरु ने सबसे पहली गोली चलाई, ताकि एक क्रांतिकारी के रूप में वे भगत से पीछे न रह जाएं. असेम्बली पर बम फेंके जाने को लेकर जब क्रांतिकारियों का चयन हो रहा था, तब राजगुरु ने खुद को भेजे जाने के लिए केन्द्रीय समिति से बहुत सिफ़ारिश की. समिति इसपर सहमत भी हुई कि भगत सिंह जयदेव और राजगुरु असेम्बली पर बम फेंकेंगे. लेकिन अंत में जब भगत सिंह और बटुकेश्वर दत्त के नाम पर सहमति बनी, तो राजगुरु बहुत नाराज हुए. इन्हें न भेजने का कारण बताते हुए जब चंद्रशेखर आजाद ने कहा कि गिरफ्तारी के बाद भगत को अंग्रेजी में पुलिस को बयान देना होगा और तुम्हें जो अंग्रेजी आती नहीं है, तो तुम बयान कैसे दोगे. इस पर राजगुरु ने कहा, आप रणजीत (भगत सिंह) से अंग्रेजी में एक भाषण तैयार करा लें, मैं उसे कॉमा और फुलस्टॉप के साथ सुना देता हूं, अगर कोई गलती हो तो मुझे मत भेजना. ऐसे थे, देश सेवा के लिए सदा तत्पर रहने वाले राजगुरु.

महाराष्ट्र में पुणे के खेड़ा गांव में हरिनारायण और पार्वती बाई के घर 24 अगस्त 1908 को एक बालक ने जन्म लिया. वो सोमवार था, जो भगवान शंकर का दिन माना जाता है और पार्वती बाई की भगवान शिव में बहुत आस्था थी. इसलिए माता-पिता ने बच्चे को भगवान शिव का आशीर्वाद मानते हुए नाम रखा, शिवराम. मराठी परिवारों की मान्यता के अनुसार पुत्र के नाम के पीछे उसके पिता का नाम जोड़ा जाता है और चूंकि हरिनारायण के वंश को राजगुरु कहा जाता था, इसलिए बालक का पूरा नाम पड़ा, शिवराम हरि राजगुरु. राजगुरु के पिता कर्मकाण्ड और पूजा पाठ करके अपने परिवार का भरण पोषण करते थे. जिससे इनकी मृत्यु हो गई. राजगुरु की उम्र मात्र 6 साल ही थी, तभी इनके पिता की मृत्यु हो गई. ये वो समय था, जब भारत को अंग्रेजों की गुलामी से आजाद कराने के लिए क्रांतिकारी आंदोलन अपने जोरों पर था. अनेक क्रांतिकारी अंग्रेजी सरकार से संघर्ष करते हुए शहीद हो चुके थे. 1919 में जलियांवाला बाग हत्याकांड के समय राजगुरु केवल 11 वर्ष के थे. इसके बाद उन्हें देशभक्ति और क्रांति के बारे में जानने की उत्सुकता हुई. इस बारे में जानने के लिए वे अपने गांव के एक बुजुर्ग के पास गए, जो अंग्रेज सेना में फौजी रह चुके थे. यही वृद्ध वो पहले व्यक्ति थे, जिन्होंने शिवराम को ये शिक्षा दी थी कि भारत सिर्फ हमारा देश नहीं है, बल्कि भारत हमारी जननी (मां) है और हम सब इसकी सन्तान हैं. देशभक्त वे हैं, जो अपनी भारत मां को अंग्रेजों की गुलामी से आजाद कराने के लिए संघर्ष कर रहे हैं. उस वृद्ध फौजी द्वारा बताई गई बातों का राजगुरु के बाल मन पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा. इनका खून खौल उठा और तब से वे खुद को एक देशभक्त के रूप में देखने लगे.

पिता की मृत्यु के बाद राजगुरु अपनी माता के साथ अपने बड़े भाई दिनकर राजगुरु के पास खेड़ा से पूना आ गए थे. वहां इनके भाई ने इनका नाम एक मराठी स्कूल में लिखा दिया. लेकिन ये बाल्यकाल से ही हठी, मस्तमौला और लापरवाह थे. इनका पढ़ाई और अध्ययन कार्यों में मन नहीं लगता था. अंग्रेजों और अंग्रेजी तौर-तरीकों से इन्हें बचपन से ही पूरी तरह नफ़रत हो गई थी. अंग्रेजी न पढ़ने को लेकर जब एक बार उनके भाई ने पूछा कि अंग्रेजी की तैयारी क्यों नहीं करते, तो शिवराम का जवाब था, मैं अंग्रेजी का अध्ययन करके अंग्रेज परस्त बनकर ब्रिटिशों के अधीन होकर कार्य नहीं करना चाहता. मैं अपना सम्पूर्ण जीवन राष्ट्र की सेवा करके बिताना चाहते हूं. बड़े भाई दिनकर को राजगुरु की ऐसी बातों को सुनकर बहुत गुस्सा आया और उन्होंने इन्हें घर छोड़कर जाने को कह दिया.

असेम्बली पर बम फेंके जाने को लेकर जब क्रांतिकारियों का चयन हो रहा था, तब राजगुरु ने खुद को भेजे जाने के लिए केन्द्रीय समिति से बहुत सिफ़ारिश की. समिति इसपर सहमत भी हुई कि भगत सिंह जयदेव और राजगुरु असेम्बली पर बम फेंकेंगे. लेकिन अंत में जब भगत सिंह और बटुकेश्वर दत्त के नाम पर सहमति बनी, तो राजगुरु बहुत नाराज हुए.

राजगुरु को तो जैसे मनमांगी मुराद मिल गई, वे खुद ही घर-बार छोड़कर देश सेवा के लिए काम करना चाहते थे. उन्होंने उसी समय घर छोड़ दिया. उन्होंने पूना के रेलवे स्टेशन पर रात बिताई. 1924 में पन्द्रह वर्ष की आयु में राजगुरु लगातार छह दनों तक पैदल चलते हुए नासिक पहुंचे. फिर वहां से झांसी, कानपुर, लखनऊ होते हुए लगभग 15 दिन बाद बनारस पहुंचे. काशी (बनारस) में राजगुरु के गुरु के सान्निध्य में रहकर संस्कृत का अध्ययन करने लगे. अध्ययन के दौरान की उनकी मुलाकात गोरखपुर से निकलने वाली स्वदेश पत्रिका के सह-संस्थापक मुनीश्वर अवस्थी से हुई. उस समय काशी क्रांतिकारियों का गढ़ था. मुनीश्वर अवस्थी के सम्पर्क से शिवराम क्रांतिकारी पार्टी के सदस्य बन गए.

राजगुरु के क्रांतिकारी विचारों को देखते हुए पार्टी के सदस्यों ने इन्हें पार्टी के एक अन्य क्रांतिकारी शिव वर्मा के साथ मिलकर दिल्ली में एक देशद्रोही को गोली मारने का कार्य दिया. दोनों दिल्ली पहुंचे. लेकिन वहां शिवराम ने गलती से किसी और को गोली मार दी. वे आत्म ग्लानि से भर गए. राजगुरु हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन (एचएसआरए) के सक्रिय सदस्य बन गए थे. पार्टी में इनके सबसे घनिष्ट साथी थे, आजाद, भगत सिंह, सुखदेव और जतिनदास. 1928 का साल था, जब पंजाब में साइमन कमीशन का विरोध करते हुए पुलिस लाठी चार्ज में 17 नवंबर को लाला लाजपत राय की मृत्यु हो गई. लाला जी की मृत्यु का बदला लेने के लिए एचएसआरए के सभी सदस्यों ने मिलकर पुलिस अधीक्षक स्कॉट को मारने की योजना बनाई. योजना के अनुसार 17 दिसम्बर 1928 को शाम 7 बजे जयगोपाल मॉल रोड चौकी के सामने अपनी साइकिल को ठीक करने का बहाना करते हुये बैठ गए और स्कॉट का इंतजार करने लगे. जैसे ही जयगोपाल ने पुलिस अधिकारी सांडर्स को आते हुए देखा उसने सांडर्स को गलती से स्कॉट समझकर राजगुरु को इशारा किया, इशारा मिलते ही राजगुरु ने गोली चला दी, जो सीधे सांडर्स को लगी और मोटर से गिर गया. उसकी मृत्यु को सुनिश्चित करने के लिए भगत ने एक के बाद एक 5-6 गोलियां चलाई.

सांडर्स की हत्या के बाद लाहौर से बच निकलने के लिए इन्होंने एक योजना बनाई. भगत सिंह को एक अंग्रेज का रूप दिया गया और दुर्गा भाभी को उनकी पत्नी का. राजगुरु, इनके अर्दली (नौकर) बने. सभी लाहौर से कानपुर जाने वाली गाड़ी में बैठे. राजगुरु और चन्द्रशेखर आजाद रास्ते में ही उतर गए वहीं भगत सिंह दुर्गा भाभी के साथ कानपुर चले गए. बाद में राजगुरु नागपुर चले गए और वहां कुछ दिन छुपे रहने के बाद आजाद के बहुत समझाने पर पूना जाकर रहने लगे. राजगुरु को इसका बहुत मलाल था कि असेम्बली में बम फेंकने के लिए उन्हें क्यों नहीं चुना गया. पूना में रहते हुए राजगुरु जिससे भी मिलते, उससे अपने द्वारा सांडर्स को गोली मारने की घटना का वर्णन करते. इसी दौरान एक सीआईडी अफसर शरद केसकर को उनपर शक हुआ. उसने राजगुरु को विश्वास में लेकर मित्रता बढ़ाई और राजगुरु ने उस पर विश्वास करके सारी बातें बता दी. केसकर की सूचना पर ही राजगुरु को 30 सितम्बर 1929 को गिरफ्तार कर लिया गया. असेम्बली बम कांड में भगत सिंह और सुखदेव भी गिरफ्तार कर लिए गए थे. उन दोनों के साथ राजगुरु को भी लाहौर षड़यन्त्र में शामिल करके केस चलाया गया. तीनों को फांसी की सजा हुई. इन्हें 24 मार्च 1931 को फांसी दी जानी थी, लेकिन इनकी बढ़ती लोकप्रियता से भयभीत होकर अंग्रेज सरकार ने एक दिन पहले 23 मार्च को ही इन तीनों को सूली पर चढ़ा दिया. भारत मां के इन सपूतों के बलिदान ने क्रांति की एक नई ज्वाला को जन्म दिया. ■

feedback@chauthiduniya.com

डेंगू जानकारी और बचाव

डेंगू बुखार होने के बाद जल्द से जल्द डॉक्टरी सलाह लेना बहुत जरूरी होता है. मादा एडीज इजिप्टी मच्छर मरीज़ को डेंगू से पीड़ित करता है. जब ये मच्छर किसी को काटता है, तो डेंगू फैलाने वाला वायरस मच्छर की लार के साथ उस व्यक्ति के शरीर में प्रवेश कर जाता है. इसके शुरुआती लक्षण सामान्य बुखार से मिलते-जुलते होते हैं.

चौथी दुनिया ब्यूरो

हाल के वर्षों में डेंगू बुखार एक खतरनाक बीमारी के रूप में सामने आया है. हर साल डेंगू से सैकड़ों लोगों की मौत हो रही है और हजारों लोगों को कई दिनों तक अस्पताल में भर्ती होना पड़ रहा है. इससे बचने का सिर्फ यही रास्ता है कि आस-पास साफ-सफाई रखी जाय और मच्छरों से सावधान रहा जाय. डेंगू बुखार होने के बाद जल्द से जल्द डॉक्टरी सलाह लेना बहुत जरूरी होता है. मादा एडीज इजिप्टी मच्छर मरीज़ को डेंगू से पीड़ित करता है. जब ये मच्छर किसी को काटता है, तो डेंगू फैलाने वाला वायरस मच्छर की लार के साथ उस व्यक्ति के शरीर में प्रवेश कर जाता है. इसके शुरुआती लक्षण सामान्य बुखार से मिलते-जुलते होते हैं.

कैसे फैलता है डेंगू

डेंगू के ज़्यादातर मामले बरसात के मौसम में देखने को मिलते हैं. डेंगू फैलाने वाले मच्छर ठहरे हुए पानी में पनपते हैं, जैसे, कूलर के पानी में, जाम हुए नालों इत्यादि में. डेंगू फैलाने वाले ये मच्छर दिन में काटते हैं. ऐसे तो सामान्य व्यक्ति भी इस मच्छर के काटने पर डेंगू का शिकार हो जाता है, लेकिन कम रोग प्रतिरोधक क्षमता वाले व्यक्तियों को ये मच्छर जल्दी से अपना शिकार बना लेते हैं.

डेंगू की पहचान

मादा एडीज इजिप्टी मच्छर मच्छर के काटने के 3 से 14 दिनों के भीतर डेंगू के लक्षण दिखने लगते हैं. तेज़ ठंड लगकर बुख़ार आना, भूख न लगना, जी मिचलाना, उल्टी और दस्त आना और सिर आंखों और जोड़ों में दर्द डेंगू के कुछ लक्षण हैं. डेंगू के मरीजों की चमड़ी के नीचे लाल धब्बे आ जाते हैं. गंभीर स्थिति में आंख, नाक से खून आने लगता है.

डेंगू से बचाव

मच्छरों से बचाव ही डेंगू से बचाव है. इसके लिए घर के अंदर और आस पड़ोस में पानी जमा न होने दें. पानी के बर्तनों को खुला न रखें. किचेन और वाशरूम को सूखा रखें. कूलर का पानी बदलते रहें. खिड़कियों और दरवाज़ों में जाली लगवाएं. घर के आस पास मच्छर मारने वाली दवा का छिड़काव करवाएं. अगर फिर भी मच्छरों के काटने की आशंका हो, तो शरीर पर मच्छर को दूर रखने वाली क्रीम लगाएं और शरीर को पूरी तरह से ढकने वाले कपड़े पहनें, साथ ही सोते समय मच्छरदानी का प्रयोग करें.

डेंगू का असर

डेंगू के मरीज का ब्लड प्रेशर घटता-बढ़ता रहता है, जिससे शिथिलता और कमज़ोरी बनी रहती है. फेफड़ों में पानी भर जाता है. दस्त और उल्टी होने लगती हैं. शरीर में लाल निशान, धब्बे बन जाते हैं और खुजली होने लगती है. स्थिति गम्भीर हो जाए, तो मुंह और नाक से ख़ून आने लगता है. मूत्र और मल के रास्ते से भी ख़ून आने लगता है.

डेंगू में खानपान

अब तक ऐसी कोई दवा नहीं है, जिससे सीधे तौर पर डेंगू का इलाज किया जा सके, सिर्फ़ शरीर की इम्यूनिटी/रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाना ही इसका एकमात्र इलाज है. डेंगू होने पर शरीर में प्लेटलेट्स की संख्या तेज़ी से घटने लगती है. ऐसी स्थिति में दवा के साथ-साथ खान-पान और सही दिनचर्या रखना बेहद ज़रूरी हो जाता है. सादा भोजन करें, जिसमें नमक स्वाद से अधिक न हो. मसालेदार और चटपटी चीज़ों का सेवन न करें. अनार, ज्वार और गेहूं के घास का रस पिएं. ताज़े मौसमी फलों का सेवन करें. नारियल पानी और साफ़ पानी अधिक से अधिक मात्रा में पिएं. डेंगू के मरीज के लिए विटामिन-सी युक्त फलों को खाना स्वास्थप्रद रहता है. नींबू, संतरे, मौसम्बी, अंगूर, स्ट्रॉबरी और जामुन में पर्याप्त मात्रा में विटामिन-सी पाया जाता है. पपीते के पत्तों का रस बनाकर दिन में दो से तीन बार पिएं. यह माना जाता है कि इससे प्लेटलेट्स की संख्या बढ़ती है. पपीते की तरह गिलोय की बेल का सत्व भी शरीर में प्लेटलेट्स की संख्या बढ़ाने में सहायक होता है. ■

feedback@chauthiduniya.com

सलमान और शाहरूख पर क्या बोल गए अजय देवगन

का फी साल पहले अजय देवगन ने एक फिल्म की थी बोल बच्चन. लगता है फिल्म करते-करते यह कला भी उनके अंदर आ गई. अब बॉलीवुड का आजकल क्या हाल चल रहा है, ये तो सब देख ही रहे हैं. न शाहरूख चल रहे हैं और न ही सलमान. वहीं अक्षय कुमार से भी ज्यादा उम्मीदें नहीं दिख रही हैं. ऐसे में अजय देवगन ने शाहरूख-सलमान की फ्लॉप फिल्मों से सबक लेकर आगे बढ़ते हुए अपनी आगामी फिल्म बादशाहो को संजाने-संवारने की सोची है. यकीन मानिए उनकी बातें कहीं से भी झूठी नहीं थीं. बस दिक्कत ये है कि अजय देवगन जो बोल रहे थे, उस पर वो खुद भी अमल नहीं कर रहे हैं. हुआ यूं कि एक इंटरव्यू में अजय देवगन सोशल मीडिया पर बात कर रहे थे. अचानक उन्होंने कहा कि शाहरूख, सलमान की फिल्में फ्लॉप हो रही हैं क्योंकि वो ये देख नहीं रहे हैं कि सोशल मीडिया पर फैन उनसे क्या कह रहा है? अगर फैन कह रहा है कि ऐसी फिल्में नहीं करनी चाहिए तो उसकी बात मान लेनी चाहिए, क्योंकि फिर वो ऐसी फिल्म नहीं देखेगा. ये बात अजय देवगन ने फिल्म *ट्यूबलाइट* और *जब हैरी मेट सेजल* के लिए कही. ■

कड़ी मेहनत ने आज इस मुक़ाम तक पहुंचाया

सैफ अली खान

सैफ ने अपने फिल्मी करियर की शुरुआत 1992 में फिल्म परंपरा से की थी. लेकिन ये सैफ का दुर्भाग्य था कि यह फिल्म बॉक्स ऑफिस पर नहीं चली. इसके बाद 1993 में उनकी दूसरी फिल्म पहचान भी बुरी तरह से फ्लॉप रही. इसके बाद उनकी और तीन फिल्में भी फ्लॉप रही थीं. इस दौरान सैफ का करियर बनने से पहले ही ख़राब हो चुका था. साल 1995 से 1998 के दौरान भी उन्होंने कई फ्लॉप फिल्में दे डालीं, जिससे उनका करियर एक बार फिर बर्बाद होने के कगार पर पहुंच गया था.

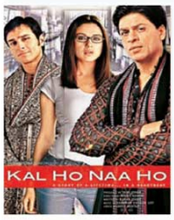

प्रवीण कुमार

बॉलीवुड में स्टार खान्स के बाद एक और खान का नंबर आता है, वह है सैफ अली खान, जिन्हें हम छोटे नवाब के नाम से भी जानते हैं. सैफ ने हाल में 47 बसंत पूरे किए हैं. सैफ अली खान का जन्म 16 अगस्त 1970 को दिल्ली में हुआ था. उनके पिता मंसूर अली खान पटौदी मशहूर भारतीय क्रिकेटर थे. उनकी मां का नाम शर्मिला टैगोर है जो अपने समय की चर्चित अभिनेत्री रही हैं. सैफ की दो बहनें हैं, जिनमें से एक सोहा अली खान हैं. वे भी सैफ की तरह फिल्मों में सक्रिय हैं, जबकि दूसरी बहन का नाम सबा अली खान है, जिन्हें कम ही लोग जानते होंगे. सैफ ने अपनी पढ़ाई लॉरेंस स्कूल, सनावार से पूरी की है. इसके बाद वे इंग्लैंड चले गए, जहां उन्होंने लॉकर्स पार्क स्कूल, हर्टफोर्डशायर और विंचेस्टर कॉलेज से पढ़ाई पूरी की. बॉलीवुड में सैफ अली खान आज जिस मुकाम पर हैं, कह सकते हैं कि वे अपनी लगन और कड़ी मेहनत के दम पर हैं. बेशक दुनिया यह कहती रहे कि वे एक रॉयल फैमिली से ताल्लुक रखते हैं, इसीलिए आज तक बॉलीवुड में जमे हैं, लेकिन ऐसा बिल्कुल भी नहीं है. करोड़ों दर्शकों ने उन्हें अपने दिल से लगाया है और उनके अभिनय को वे पसंद भी करते हैं. यही कारण है कि सैफ पिछले 2 दशक से भी ज्यादा समय बॉलीवुड में बिता चुके हैं. इतना ही नहीं, 47 साल के होने के बावजूद वे आज भी अपनी फिल्मों में आधी उम्र की अभिनेत्रियों के साथ इश्क फरमाते दिख जाते हैं.

बॉलीवुड में उनका सफल करियर रहा है. उन्हें कई अवॉर्डों से भी नवाज़ा जा चुका है, जिसमें राष्ट्रीय फिल्म पुरस्कार और 6 बार फिल्मफेयर का सम्मान भी शामिल है. उन्हें भारत सरकार की ओर से पद्मश्री अवॉर्ड भी मिल चुका है. नवाब खानदान से ताल्लुक रखने की वज़ह से सैफ अली खान अपने नवाबी अंदाज के लिए भी जाने जाते हैं.

हम आपको बता दें कि सैफ की जिंदगी भी किसी फिल्मी स्टोरी से कम नहीं है, ख़ासतौर पर उनका वैवाहिक जीवन. सैफ और अमृता की मुलाक़ात राहुल रवैल के फ़िल्म सेट पर हुए थी, सैफ को अमृता बहुत पसंद आई. इसके बाद दोनों में अफेयर शुरू हुआ और बाद में दोनों ने शादी कर ली. दोनों की उम्र में 12 साल का अन्तर था. इनके दो बच्चे भी हैं. लड़की का नाम सारा अली खान है, तो वहीं लड़के का नाम इब्राहिम अली खान है, लेकिन कुछ सालों के बाद इन दोनों का तलाक हो गया. इसके बाद उन्होंने अपने से 10 साल छोटी करीना कपूर से शादी कर ली. करीना-सैफ का एक बेटा भी है, जिसका नाम तैमूर अली खान है.

अगर हम सैफ के करियर की बात करें तो उनका करियर शुरुआती दिनों में कुछ ख़ास नहीं चल रहा था. उन्होंने अपने करियर की शुरुआत 1992 में फिल्म *परंपरा* से की थी. लेकिन ये सैफ का दुर्भाग्य था कि यह फिल्म बॉक्स ऑफिस पर कुछ खास कमाल नहीं दिखा सकी. इसके बाद 1993 में उनकी दूसरी फिल्म *पहचान* भी बुरी तरह से फ्लॉप रही. इसके बाद उनकी तीन अन्य फिल्में भी फ्लॉप रही थीं. कह सकते हैं कि सैफ का फिल्मी करियर बनने से पहले ही खराब हो चुका था. लेकिन 1994 में अक्षय कुमार के साथ सैफ की जोड़ी को ख़ूब पसंद किया गया और इस साल इन दोनों की फिल्म *ये दिल्लगी* और *मैं खिलाड़ी तू अनाड़ी* हिट रही. लेकिन सैफ की गाड़ी ज्यादा समय तक पटरी पर नहीं चल सकी. साल 1995 से 1998 के दौरान उन्होंने फिर कई फ्लॉप फिल्में दे डालीं, जिससे उनका करियर फिर बर्बाद की कगार पर पहुंच गया.

सैफ में कुछ तो दम था, जो इतनी फ्लॉप फिल्में देने के बाद भी डायरेक्टर उन्हें फिल्मों में चांस पे चांस दिए जा रहे थे. साल 1999 में उन्हें काफी राहत मिली. इस साल उनकी तीन फिल्में आईं, जिसमें हम साथ-साथ हैं और कच्चे धागे तो हिट रही, लेकिन आरज़ू फ्लॉप रही. समय जैसे-जैसे बीतता गया, इस खान का करियर भी उतार चढ़ाव के दौर से गुजरता रहा. आगे चलकर सैफ की फिल्म कल हो न हो, हम तुम, सलाम नमस्ते, ओमकारा, ता रा रम पम, रेस, लव आजकल, कॉकटेल, रेस-2, गो गोवा गॉन आदि फिल्में हिट-सुपरहिट रहीं. सैफ अली खान आज भी बॉलीवुड में सक्रिय हैं और सफल अभिनेताओं में गिने जाते हैं.■

feedback@chauthiduniya.com

सैफ से जुड़ी कुछ अहम जानकारियां

जब सैफ ने अमृता को लेकर किए कई ख़ुलासे

सैफ अली खान और अमृता सिंह ने हमेशा अपने तलाक के बारे में कोई बात नहीं की है. दोनों का तलाक 10 साल पहले हो गया था लेकिन इस बारे में दोनों ने ही हमेशा खामोशी बरती और एक-दूसरे के बारे में कुछ भी गलत नहीं कहा. लेकिन सैफ अली खान ने साल 2005 में टेलिग्राफ को जो इंटरव्यू दिया था, तब उस इंटरव्यू को लेकर सोशल मीडिया पर बवाल खड़ा हो गया था. इसमें सैफ ने पर्सनल लाइफ के बारे में कुछ सनसनीखेज खुलासे किए थे.

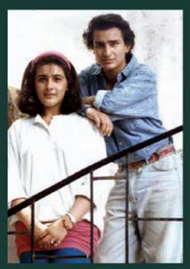

इस इंटरव्यू में सैफ ने अपने और अमृता के संबंधों के बारे में बात करते हुए कहा था, आपको बहुत बुरा लगता है, जब आपको बार-बार जताया जाता है कि आप बेकार हैं. हर समय आपकी मां और बहन को गालियां दी जाती हैं. मैं लंबे समय तक इस दौर से गुज़रा हूं. इसके अलावा सैफ ने अमृता को तलाक के बाद खर्च के लिए दी गई रकम के बारे में भी चर्चा की है. सैफ ने कहा, मुझे तलाक के बाद अमृता को 5 करोड़ रुपए देने थे, जिसमें से लगभग 2.5 करोड़ रुपए मैं पहले ही दे चुका हूं. इसके अलावा जब तक मेरा बेटा 18 साल का नहीं हो जाता, तब तक मैं हर महीने 1 लाख रुपया भी देता रहूंगा. मैं कोई शाहरूख खान नहीं हूं और मेरे पास इतना पैसा भी नहीं है. मैंने उनसे (अमृता) से वादा भी किया है कि मैं पूरी रकम चुका दूंगा और आगे भी अंतिम सांस तक देता रहूंगा.

सैफ ने अपने इस इंटरव्यू में यह भी कहा कि उन्होंने विज्ञापन, स्टेज शो और फिल्मों से जो भी पैसा कमाया है, वह उसे अपने बच्चों के लिए दे देते हैं. उन्होंने कहा, *मेरे पास कोई पैसा नहीं है और मेरा घर भी अमृता और बच्चों के लिए है.* उन्होंने अपनी उस समय की गर्लफ्रेंड रही रोज़ा के बारे में बात करते हुए कहा, रोज़ा फिल्म इंडस्ट्री से नहीं हैं और हम दोनों एक दो कमरे के फ्लैट में रहते हैं. रोज़ा अमेरिका की हैं और फिल्म इंडस्ट्री से बाहर की हैं. उनके साथ रहते हुए मुझे ऐसा महसूस होता है कि मैं बेकार नहीं हूं.■

सैफ-करीना की लव स्टोरी

साल 2007 के आसपास शाहिद कपूर से ब्रेकअप होने के बाद करीना कपूर की नज़दीकियां सैफ अली खान के साथ बढ़नी शुरू हुई थीं. फिल्म *ओमकारा* के बहुत कम सीन सैफ और करीना को एक साथ शूट करने थे. सेट पर दोनों साथ-साथ दिखते. जब करीना या सैफ के सीन साथ में नहीं होते, तब भी वे दोनों सेट पर साथ बने रहते.

ओमकारा के बाद सैफ करीना की नज़दीकी यशराज बैनर की फिल्म *टशन* की शूटिंग के समय और बढ़ी. शूटिंग से वक्त निकालकर दोनों लॉन्ग वॉक पर जाते. इन दोनों के अफेयर के गॉसिप बनने शुरू हो चुके थे, पर मीडिया के सामने दोनों ने ही इसे स्वीकार नहीं किया था. लेक्मे फैशन वीक के दौरान सैफ-करीना पहली बार साथ-साथ एक ही गाड़ी से आए. यहां पहली बार सैफ अली खान ने माना कि वह करीना के साथ डेट कर रहे हैं. इसके बाद धीरे-धीरे दोनों एक दूसरे के नजदीक आते गए और अंत में शादी करने का फैसला किया. अपने से 10 साल बड़े सैफ अली खान से शादी करने से पहले करीना ने उनके आगे एक शर्त भी रखी थी. यह शर्त शुरू में किसी को भी पता नहीं थी, लेकिन इसी साल मार्च में वुमन्स डे सेलिब्रेशन के दौरान करीना ने मीडिया के आगे इस बात का खुलासा किया कि आखिर वह शर्त क्या थी? वुमन्स डे सेलिब्रेशन इवेंट के दौरान करीना ने मीडिया से कहा था, *आज मैं एक बाइफ हूं, कल शायद मां बनूंगी. लेकिन ताउम्र काम करते हुए पैसे कमाऊंगी, जिसमें मेरे पति मेरा सपोर्ट करेंगे. सिर्फ इस शर्त पर मैंने सैफ से शादी की है.* ■